तरुण-भारत-ग्रन्थावली-४

अब्राहम लिंकन।

स्वसुखनिरभिलाषः खिद्यसे लोकहेतोः,
प्रतिदिनमथवा ते वृत्तिरेवंविधैव।
अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णं--
शमयति परितापं छायया संश्रितानाम्।

कालिदास।

लेखक--

पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी।

भारतीय नवयुवकों द्वारा सञ्चालित

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-सं० ४

राष्ट्रपति

एब्राहम लिंकन

"If slavery is not wrong, nothing is wrong."
—Abraham Lincon.

पं० विनायक कोंडदेव ओक

की

मराठी पुस्तक का अनुवाद।

प्रकाशक

दीक्षित और द्विवेदी

दारागंज-प्रयाग।

आवृत्ति १००० | संवत् १९७४ वि० | मूल्य ।)

प्रकाशक
दीक्षित और द्विवेदी
दारागंज-प्रयाग।

मुद्रक
नारायण रामचन्द्र गुंठे
बालकृष्ण प्रेस, दारागंज-प्रयाग।

प्रस्तावना

स्वर्गीय विद्वद्वर पं० विनायक कोंडदेव ओक महाशय, कि जिनकी लिखी हुई "फ्रांस की राज्यक्रांति" नामक पुस्तक का अनुवाद "तरुण भारत ग्रन्थावली" में निकल चुका है, इन्हीं का लिखा हुआ लिंकन का चरित्र, कोई १० । ११ वर्ष हुए, हमने मराठी भाषा में पढ़ा था; उसके बाद "सरस्वती" मासिक पत्रिका में श्रीयुक्त (अब स्वामी) सत्यदेव जी का अमेरिका से लिखा हुआ एक लेख भी लिंकन के विषय में हमारे पढ़ने में आया । तभी से इस चरित्र को हिन्दी में करने की हमारी इच्छा हुई । परन्तु बीच में अन्य साहित्य कार्यों में लगे रहने से इस कार्य को हम हाथ में नहीं ले सके । अब तरुण भारत-ग्रन्थावली में यह पुस्तक प्रकाशित की जाती है । यह पुस्तक हमने उपर्युक्त ओक महाशय की पुस्तक पर से ही तैयार की है । परन्तु यह उसका अविकल अनुवाद नहीं है, हमने, जहां तक हम से हो सका है, इसे वर्तमान समय में नवयुवकों के लिए उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया है । बहुत कुछ स्वतंत्रता से काम लिया है । हमें कहां तक सफलता प्राप्त हुई है, इसका निर्णय पाठकगण स्वयं करेंगे ।

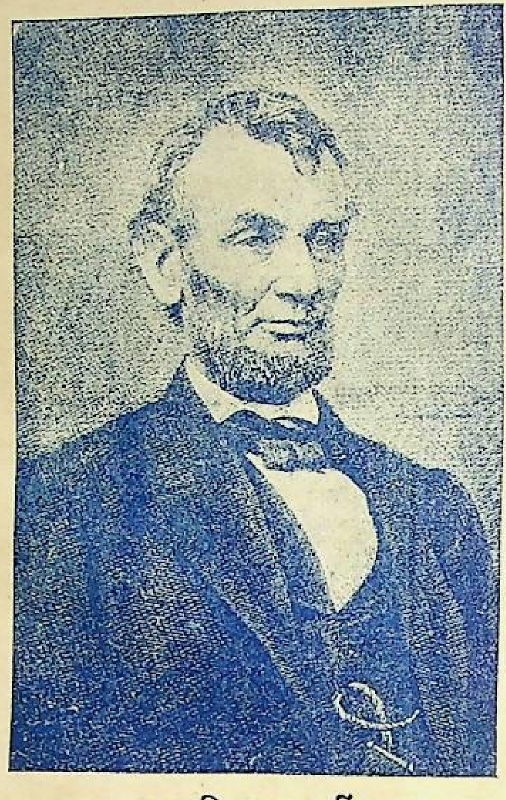
हमारी मातृभाषा में ऐसे जीवन चरित्रों की बहुत आवश्यकता है कि जिनको पढ़ कर हमारे नवयुवक अपने देश की सेवा करने के लिए कटिबद्ध हों । शायद कई लोग कहेंगे कि क्या ऐसे आदर्श हमारे देश में नहीं हैं जो तुम विदेशियों के जीवन चरित्र हमारे आगे रखते हो । ऐसे सज्जन कृपा करके हमें क्षमा करें, हम इस मत को मानने वाले नहीं हैं । हमारा तो यह विचार है कि जो महापुरुष हमारे सामने स्वतंत्रता और

देशसेवा का आदर्श रखता है– फिर वह महा पुरुष चाहे भारतीय हो, चाहे सात समुन्दर पार का हो–वह हमारे लिए पूज्यनीय है–हम उसके आदर्श पर चलने को तैयार हैं। महापुरुषों का जन्म किसी एक देश अथवा किसी एक ही काल के लिए नहीं होता; किन्तु उनका जीवन प्रत्येक देश और सब काल के लिए, सब श्रेणी के मनुष्यों के लिए, अनुकरणीय होता है। इसी लिए हमने अपनी ग्रन्थावली में देशी विदेशी, सब प्रकार के महापुरुषों के जीवनचरित्र प्रकाशित करने का विचार किया है। हमें आशा है कि हमारे प्रेमी इस ढंग को अवश्य पसन्द करेंगे।

मूल मराठी पुस्तक, जिसके आधार पर यह पुस्तक तैयार की है, ओक महाशय ने, अपने आनरेबल जस्टिस काशीनाथ त्रिम्बक तैलंग की सूचना पर अँगरेज़ी के कई ग्रन्थों के आधार पर लिखी थी; फिर स्वयं तैलंग महाशय ने भी ओक महाशय की पुस्तक में बहुत कुछ उत्तम सुधार किये थे। यहां तक कि ओक महाशय अपनी प्रस्तावना में लिखते हैं कि "इस पुस्तक में रसिकों के लिए मान्य, विद्वानों के लिए प्रिय, सर्वसाधारण लोगों के लिए उपदेशप्रद और मर्मज्ञों के लिए मनोरञ्जक जो कुछ कहीं मिलेगा वह सब इस सत्पुरुष (तैलंग महाशय) के हस्तस्पर्श का फल है।" इससे प्रस्तुत चरित्र सुलेख की सुन्दरता का पता पाठकों को मिलेगा। हां, हम इतना अवश्य कहेंगे कि मूल पुस्तक की सुन्दरता की रक्षा हमने अपने इस स्वतंत्र अनुवाद में करने की पूरी पूरी कोशिश की है, अपनी ओर से इसे विशेष सामयिक बनाने का प्रयत्न किया है। अन्तमें सर्वशक्तिमान परमात्मासे यही प्रार्थना है कि ऐसे महात्माओं के पद चिन्हों पर चलने की हम लोगोंको शक्ति प्रदान करे।

पूना सिटी, आषाढ़
शुक्ल ५, संवत् १९७४।

लक्ष्मीधर वाजपेयी



राष्ट्रपति एब्राहम लिंकन।

चित्रशाला प्रेस, पूना।

एब्राहम लिंकन।

पहला अध्याय।

विषय-माहात्म्य।

सन्त और सन्त-समागम का महत्व।

सदैव सदाचरण के साथ चलकर तन-मन-धन से जो पुरुष संसार का उपकार करते रहते हैं, फिर चाहे वह उपकार लौकिक हो या पार-लौकिक, और ऐसे पुरुष, चाहे स्वदेश में हों, चाहे विदेश में—वे सब साधु हैं। ऐसे पुरुषों का समागम ही सन्त-समागम कहलाता है; उसी को सत्संगति कहते हैं। उसका माहात्म्य बहुत बड़ा है। राजर्षि भर्तृहरि कहते हैं:—

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यम्
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिम्
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।

सत्संगति बुद्धि की जड़ता को हरती, वाणी को सत्य से सींचती, मान को बढ़ाती, पाप को दूर करती, चित्त को

प्रसन्न करती, और यश को फैलाती है। बस अब और क्या चाहिए? मनुष्य के लिए जिन बातों की जीवन में आवश्यकता है, सब कुछ सत्संगति के द्वारा होता है; ऐसी कौन बात है जो सत्संगति से नहीं होती ?

महात्मा तुलसीदास जी कहते हैं:—

मति, कीरति, गति, भूति, भलाई ।
जब, जेहि जतन, जहां जेहिं पाई ॥
सो जानब सतसंग प्रभाऊ ।
लोकउ वेद न आन उपाऊ ॥
बिन सतसंग विवेक न होई ।
राम-कृपा बिन सुलभ न सोई ॥
सतसंगति मुद–मंगल–मूला ।
सोई सब सिधि सब साधन फूला ॥
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई ।
पारस परसि कुधातु सुहाई ॥

अब आप ही समझ लीजिए कि सत्संगति से मनुष्य का कितना कल्याण होता है। जिसको सत्संगति प्रत्यक्ष प्राप्त हो उसके लिए क्या कहना है, ऐसे मनुष्यों को धन्य है। संसार के उद्धार करने का मार्ग, साधुओं के आचरण से, उन्हें सहज ही प्राप्त हो जाता है। परन्तु देशकाल की दूरी से जिन को

सन्तचरित्र पढ़ना भी सन्त-समागम ही है।

प्रत्यक्ष सन्त-समागम प्राप्त न होसके उन्हें सन्तों के जीवन-चरित्रों को पढ़कर ही वह उद्देश्य सिद्ध करना चाहिए। उन के लिए यही सन्त-समागम है। प्रत्यक्ष समागम से जिस प्रकार हम सन्तों के सद्गुण ग्रहण करते हैं उसी प्रकार उन के जीवनचरित्र को पढ़कर—उसको मनन करके—उनके सद्गुणों का अनुकरण कर सकते हैं।

सन्त-समागम का फल।

महापुरुषों के सद्गुणों के अनुकूल अपने चरित्र को बनाना—वैसा ही स्वयं भी आचरण करना—यही सन्त-समागम का फल है। प्रत्येक विचारशील मनुष्य को यह फल प्राप्त हो सकता है। बस, हमारे भारतीय तरुणों को, किसी न किसी अंश में, उपर्युक्त फल की प्राप्ति हो, इसी हेतु को मन में रख कर हमने यह छोटा सा चरित्र लिखा है। इस चरित्र की कथा बहुत हृदय-ग्राहिणी और जीवन-साफल्य-प्रदायिनी है। उसे प्रारम्भ करने के पहले, जिस राष्ट्र में वह महापुरुष उत्पन्न हुआ है, उस राष्ट्र के विषय में भी यहां कुछ संक्षेप से बतलाना आवश्यक प्रतीत होता है।

———

दूसरा अध्याय ।

देश-काल-वृत्तान्त ।

अमेरिकन रियासतों का आविर्भाव ।

सन् १४९२ में जब कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की तब यूरप के बहुत से लोग, अपने देश के झगड़ों से घबड़ा कर, धन कमाने की आशा से, अपने सुभीते के अनुसार, वहां जाकर बसने लगे। पहले वहां स्पेनियार्ड लोगों ने जाकर अड्डा जमाया, उनके बाद फ्रेंच लोगों ने और फिर अंगरेजों ने जाकर वहां अपनी बस्ती की। ये सब लोग अपने अपने देशों के राजाओं की सम्मति और सहायता से वहाँ जाकर रहे थे और उनकी बस्तियां उन राजाओं के ही अधिकार में मानी जाती थीं। इन बस्तियों की जब अच्छी उन्नति हो गई; और उनका राज्य-प्रबन्ध और व्यापार अच्छी दशा में आया तब उन्हें 'रियासतें' कहने लगे। इन रियासतों का राज्य-प्रबन्ध करने के लिए, उनके असली देशों के राजाओं की ओर से, मुख्य अधिकारी आते रहते थे। तथापि रियासतों का सारा प्रबन्ध लोगों की अनुमति से ही होता था। इस प्रकार की, अंगरेजों की तेरह रियासतें थीं:- वर्जीनिया, मेरीलेंड, दो क्यारोलिना, जार्जिया, न्यूयार्क, न्यूज-

र्सी, पेनसिलवेनिया, डिलावेर, मासाचुसेटस, कानिक्टिकट न्यूहांपशायर और रोडद्वीप। इन रियासतों का प्रबन्ध करने के लिए इंगलैंड से सूबेदार आते रहते थे और वहां की पार्ली-मेंट के बनाये हुए कायदों तथा रियासतों की प्रजा के विचार से बने हुए नियमों के अनुरोध से वे राज्यप्रबन्ध करते रहते थे।

इंगलैंड के साथ बिगाड़।

कितने ही वर्षों तक यह प्रबन्ध अच्छी तरह चलता रहा। परन्तु, धन का लोभ बड़ा कठिन है। रियासतों के राज्याधिकार और व्यापार से इंगलैंड को बहुत सा लाभ होने लगा। और बाबा तुलसीदास के कथनानुसार "जिमि प्रति-लाभ लोभ अधिकाई"— जैसे जैसे लाभ होता गया वैसे वैसे ही इङ्गलैंड वालों का लोभ भी बढ़ता ही गया। यहां तक कि, वे लोग समझने लगे कि आखिरकार अमेरिकन रियासतों के लोग हैं तो इङ्गलैंड के ही बच्चे; इस लिए अपनी मातृ-भूमि का कहना उन्हें, बिना किसी उज्र के, शिरोधार्य करना चाहिए और इङ्गलैंड जितना मांगे उतना धन उसे देना चाहिए। और इधर अमेरिका के लोगों का यह कहना हुआ कि हां, इङ्गलैंड के बच्चे तो हम ज़रूर हैं, परन्तु इस दूर देश में आकर जो हम रहे हैं सो इसका यह मतलब नहीं है कि हमारे अधि-कार इङ्गलैंड-निवासियों से कुछ कम हो गये हैं— हम और वे बराबर हैं; इस लिए उनके पक्ष के सभासद जैसे पार्लिमेंट में

बैठते हैं वैसे ही हमारे भी लेने चाहियें; ऐसा जब होगा तब हम खुशी से पार्लिमेंट के नियमों को सिर झुकायेंगे; और जब तक हमारे पक्ष के सभासद पार्लिमेंट में नहीं होंगे तब तक हम इङ्गलैंड की सरकार का कानून नहीं मानेंगे। अर्थात् उनके कथन का अभिप्राय यही था कि सम्पूर्ण राज्य-प्रबन्ध में जब तक हमारी सम्मति नहीं ली जायगी, हम राजाज्ञा नहीं मानेंगे।

स्वतंत्र होने की इच्छा, कश-मकश और दंगा।

ऐसा जब बिगाड़ हुआ तब कलह मची। उस के पूरे पूरे वर्णन करने का यह स्थान नहीं है। तो भी, उस समय की एक दो बातें यहां बतला देना आवश्यक है, जिससे हमारे पाठकों को इस बात का कुछ अनुमान हो जाय कि अमेरिका के लोग उस समय स्वतंत्र होने के लिए कितने जोश में थे। १७६५ के मार्च महीने में इंगलैंड की सरकार ने एक नवीन कानून बनाया। उस में ऐसा निश्चित किया कि अमेरिकन रियासतों के लोगों को, इङ्गलैंड के लोगों की तरह अपने सारे देन-लेन में और सरकारी काम में स्टांप का उपयोग करना चाहिये। बस, इस समाचार को सुनते ही वहां के लोग बिगड़ उठे। चारों ओर लोग एकत्र होकर दंगा मचाने लगे। बोस्टन, न्यूहांपशायर, इत्यादि बड़े शहरों में स्टांप बेचनेवाले अधिकारियों को लोगों ने खूब मारा पीटा; उनकी दुकानों में आग लगाकर सब सत्यानाश कर दिया, और स्टांप लेने के लिए जो लोग

आग्रह करते थे उनकी नाक में दम कर दी, तब तो तुरन्त ही चुपके से इङ्गलैंड की सरकार को वह कानून रद करना पड़ा।

इसके बाद दूसरा दंगा चाय के प्रकरण को लेकर हुआ। लोगों के झगड़ने पर इङ्गलैंड से आनेवाली अन्य सारी वस्तुओं का कर उठा दिया गया था, परन्तु चाय का कर इङ्गलैंड के राजा तीसरे जार्ज के आग्रह से, जैसा का तैसा ही बना रक्खा था। बस, इस पर अमेरिका के लोगों ने बहिष्कारास्त्र छोड़ ही तो दिया—उन्हों ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि जिस चाय पर यह कर लगा है वह चाय ही नहीं लेंगे। परन्तु इधर इङ्गलैंड की सरकार क्या कुछ थोड़ी थी—उसने यह हट पकड़ा कि वही चाय तुम को लेनी पड़ेगी। दोनों ओर से खूब कश-मकश हुई। १६ दिसम्बर सन् १७७३ के दिन, इस विषय पर विचार करने के लिए एक बड़ी भारी सभा हुई, जिसमें दस दस कोस आस-पास के लोग आये, और इस प्रकार लगभग ७००० लोगों का जमाव हुआ; और उन्हों ने ऐसा प्रस्ताव पास किया, कि इस बात में हम सरकार की हट चलने नहीं देंगे। उन्हों ने सोचा कि जिसके पीछे यह सारा झगड़ा है उसी को जड़ मूल से नष्ट न कर दिया जाय! बस फिर क्या था, उनमें से कोई पचास लोगों ने, अमेरिका के जङ्गली लोगों का रूप धर कर, रात को जहाजों पर धावा बोल दिया और ३४२ संदूक चाय के उन्हों ने समुद्र में डाल दिये! ख़ैर।

इस प्रकार अमेरिका के लोगों और अंगरेजी सरकार का वैमनस्य बहुत बढ़ गया; और दोनों ओर की सेनाएं जगह जगह एकत्र होकर लड़ाई होने लगी। उस लड़ाई के समय, न सिर्फ अमेरिका के पुरुषों ने, बल्कि वहां की स्त्रियों ने भी, अपने देश में स्वतन्त्रता स्थापित करने के लिए, जो जो कार्य किये वे बखान करने योग्य हैं। उनको पढ़ कर मन में एक बार यही आता है कि राष्ट्र को स्वतंत्रता प्राप्त कराने के लिए, दृढ़ निश्चय के समान दूसरा उत्तम साधन नहीं। दृढ़ संकल्प में क्या शक्ति है और उसका फल कैसा होता है—सो मूर्तिमान सामने खड़ा हो जाता है। जो हो, उस लड़ाई में अंगरेजी सरकार हार गई और उसकी रियासतों के लोग जीत गये। उन पर इंगलैंड के राजा की जो सत्ता थी उसे उन्होंने निकाल कर फेंक दिया; और अपने को बिलकुल स्वतंत्र—अर्थात् हम किसी राजा की प्रजा नहीं—ऐसा आघोषित किया। यह घोषणा पहले दूसरे राष्ट्रों ने स्वीकार की; और फिर अन्त में, १७८२ में, इंगलैंड को भी स्वीकार करनी पड़ी।

युद्ध के बाद पूर्ण स्वातंत्र्य।

बस, उसी समय से अमेरिका में प्रजासत्ताक राज्य है। वहां कोई राजा नहीं। सब रियासतों के लोग अपनी अपनी ओर से गवर्नर नियत करते हैं; और कुछ नियमित काल तक उनके द्वारा अपना राज्यप्रबन्ध कराते हैं; तथा उन सब पर एक

प्रजासत्ताक राज्य और उसका प्रबन्ध।

मुख्य अधिकारी, बहुमत से, नियत करते हैं। उसे प्रेसिडेंट या अध्यक्ष कहते हैं; राष्ट्रपति कहलो। इसका वेतन आज कल २२५००० रु० वार्षिक है। इसकी मुद्दत पांच वर्ष की होती है। उसके खतम होने पर बहुमत से नवीन चुनाव होता है। इस तरह उनका प्रजासत्ताक राज्य अच्छा चल रहा है। सब से पहला अध्यक्ष जार्ज वाशिंगटन था। उसने जिस प्रकार अपने सद्गुणों के बल पर यह पद पाया था उसी प्रकार उसके पीछे के अध्यक्ष भी अपने निज के सद्गुणों के कारण ही यह पदवी पाते गये। उन सब के चरित्र में एक बात स्पष्ट देख पड़ती है। और वह यह कि, मनुष्य को यदि अपनी योग्यता के अनुसार कहीं बड़ा पद प्राप्त हो सकता है तो वह प्रजासत्ताक राज्य में ही प्राप्त हो सकता है। मनुष्य के सद्गुणों का विकास होने के लिए प्रजासत्ताक राज्य का क्षेत्र ही सर्वोत्तम है। अमेरिका की रियासतों का प्रजासत्ताक राज्य बड़ी उत्तमता से चल रहा है। उनका क्षेत्रफल लगभग ३०लाख वर्गमील है; आबादी छै करोड़ के लगभग है; ७५ करोड़ के लगभग आमदनी है; ख़र्च ५५ करोड़ के क़रीब है; सेना में सिपाही २५००० हैं; उन पर अफसर २१७७ हैं। यह संख्या कुछ काल पहले की है। अब तो दिन पर दिन वृद्धि हो रही है। इन रियासतों का सोलहवां अध्यक्ष एब्राहम लिंकन हमारा चरित्रनायक है। अब अगले अध्याय से इसके चरित्र का प्रारम्भ होता है।

तीसरा अध्याय ।

माता-पिता, जन्म-बालपन, इत्यादि ।

महापुरुषों का जन्म और बालपन ।

संसार के व्यवहार में यह एक बड़ी भारी विलक्षणता देखी जाती है कि जो बातें वस्तुतः बिलकुल साधारण होती हैं वे भी बड़ों का संसर्ग पाकर महत्व पा जाती हैं। पैरों की पादुका सभी के पास होती हैं, उनका कोई वर्णन नहीं करता। परन्तु श्रीरामचन्द्र की पादुका भरतजी ने राजगद्दी पर स्थापित कीं, उनका कवियों ने बड़ा महत्व गाया है। यही हाल मनुष्य के जन्म और बालपन का है। जन्म और बालपन सभी के होते हैं, इसमें कुछ विशेषता नहीं, पर महापुरुषों के जन्म और बालपन भी सब लोगों को महत्वपूर्ण मालूम होते हैं, और लोग अपना बहुत सा अमूल्य समय, तथा धन, खर्च करके उनका पता लगाते हैं, बड़ी कोशिश करते हैं। परन्तु अमुक मनुष्य आगे चलकर बड़ा होने वाला है, यह किसी को मालूम नहीं रहता, इस कारण महापुरुषों के जन्म और बालपन का वृत्तान्त भी प्रायः कभी कभी, अन्य लोगों की तरह, दुर्लभ ही रहता है। बस, हमारे चरित्रनायक एब्राहम लिंकन के जन्म और बालपन का भी यही हाल हुआ है।

अस्तु। उत्तर अमेरिका की रियासतों में केंटके नामक एक रियासत है। वहां टामस लिंकन नामक एक गरीब मनुष्य रहता था। वह सिर्फ अपने हस्ताक्षर भर कर सकता था। और बाकी वह बिलकुल निरक्षर भट्टाचार्य था। वह मजदूरी का काम कर के अपना निर्वाह करता था। उसी में से कुछ धन बचा करके उसने सन् १८०६ में एक गरीब, पर सुशील, स्त्री से विवाह किया। यह जोड़ा बहुत अच्छा मिला। परस्पर बड़ी प्रीति थी। उनका घर गरीबी का था। तो भी वे इतने प्रेम से रहते कि यही जान पड़ता कि इनके शरीर तो दो हैं; पर मन दोनों का एक है। दोनों बड़े धार्मिक थे। वे सब काम ईश्वर को स्मरण करके करते और उनका भला-बुरा फल परमेश्वर के अधीन छोड़कर स्वयं बड़ी शान्ति से रहते।

गरीब, परन्तु पवित्र, माता-पिता के घर जन्म।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

इस गीता-वाक्य की शिक्षा उन्हें स्वाभाविक ही मिली थी। वे सदैव आनन्दित रहते। उन्हें दरिद्रता का कष्ट जरा सा भी नहीं मालूम होता था। वे समझते थे कि यदि हम में कुछ अधिक विद्या होती तो हमें अधिक धन मिला होता। फिर, उनके मन में यह भी बात अच्छी तरह बैठ गई थी कि सांसारिक सुख-दुःख क्षणभंगुर हैं, इससे उनकी ओर विशेष ध्यान न रख कर पारलौकिक अविनाशी सुख के लिए ही

मनुष्य को मन-वचन-कर्म से लगना चाहिए । सारांश, वे गरीब और सन्तोषी थे; पर उनका आचरण अत्यन्त पवित्र था । इस पवित्र दम्पति के तीन बच्चे हुए । उनमें से दूसरा लड़का हमारा चरित्र-नायक लिंकन, १२ फरवरी सन् १८०९ में उत्पन्न हुआ ।

माता की गोद ही उत्तम पाठ-शाला है ।

भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है कि गरीब, परन्तु पवित्र कुल में जन्म पाना बहुत दुर्लभ है; पूर्व जन्म की बड़ी तपस्या से ऐसे घर में जन्म मिलता है, सो ठीक है । गरीब माता-पिता यदि पवित्राचरणी हुए तो लड़के का तप बढ़ता है; धन के कोई प्रलोभन उसके कार्य में बाधा नहीं डालते; वह परिश्रमी भी बनता है और पवित्राचरण से उसकी उन्नति होती ही जाती है। लिंकन के माता-पिता भी अपनी सात्विक वृत्ति, अपने बच्चों के हृदय में स्थापित करने में रात-दिन प्रयत्न करते थे । उस समय पुस्तकों का प्रचार बहुत नहीं था; तो भी, बड़े प्रयत्न से, जो थोड़ीसी अच्छी पुस्तकें उन्हों ने प्राप्त की थीं, वे बड़े प्रेम से, माता अपने बच्चों को रोज पढ़ाया करती थी । उन पुस्तकों में उनकी पवित्र धर्मपुस्तक मुख्य थी। लिंकन के माता-पिता के हृदय में यह पूर्ण विश्वास था कि हमारी इस धर्मपुस्तक के समान संसार में और पुस्तक मिल नहीं सकती और इस के अनुसार जो मनुष्य धर्माचरण करेंगे उन्हें पारलौकिक सुख

प्राप्त हुए बिना नहीं रहेगा। अतएव, उन्होंने अपने आचरण, तथा मनोरंजक उपदेश के द्वारा, अपने बालकों के हृदय में, अपना उपर्युक्त धार्मिक विश्वास, पूर्ण रूप से भर दिया। ऐसी दशा में वे लड़के आगे चल कर धर्मशील निकले, इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। सच तो यह है कि लड़के धातुओं के पतले रस के समान हैं और मा बाप ढालने के सांचे हैं; जैसे सांचे होंगे वैसे ही पदार्थ ढल जायँगे। सो, प्यारे नवयुवको! तुम अपनी भावी सन्तान को जैसा बनाना चाहते हो वैसे तुम पहले स्वयं बनो।

"मातृमान् पितृमानाचार्यमान् पुरुषो वेद"।

एब्राहम लिंकन जब छोटा था तब कैंटके प्रान्त में पाठशालाएं एक प्रकार से बिलकुल ही नहीं थीं। हां, कुछ लोग छोटे लड़कों को एक जगह एकत्र करके उन्हें पढ़ाने का उद्योग करते रहते थे। ऐसे लोगों में से एब्राहम लिंकन का सब से पहला शिक्षक 'ज़रारा रेनी' था। इसके बाद लिंकन 'कालेब हाज़ेल' नामक शिक्षक की चटशाला में जाने लगा। उसने उसे पढ़ना सिखाया। एब्राहम के पिता टामस लिंकन में विद्या नहीं थी, पर विद्या की क़दर वह जान चुका था। इस कारण अपने लड़कों की पढ़ाई में वह बड़ी कोशिश रखता था। ऐसी माताएं बहुत होती हैं जिनके स्तनों में लड़के का पेट भरने भर के लिए दूध नहीं होता; तो भी उनका पेट भरता ही है;

क्योंकि अपने बच्चों पर उन माताओं का प्रेम बहुत होता है; और उन्हें यह अच्छी तरह ज्ञात रहता है कि उनका पेट भरना हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है। सारांश, स्तनों के दूध से भी अधिक हृदय का प्रेम होता है। बस, यही हाल विद्या के विषय में समझिये। माता-पिता चाहे स्वयं विद्वान् न हों; पर विद्या की क़दर जान कर हृदय से यदि वे अपने बालकों को विद्वान् बनाना चाहते हैं तो उनके हाथ से इसके लिए प्रयत्न भी होता है और निस्सन्देह उनके बालक विद्वान् निकलते हैं। इसी लिए, जो माता-पिता अपने बच्चों को नहीं पढ़ाते उनके लिए कहा गया है।

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
सभामध्ये न शोभन्ते हंसमध्ये बको यथा ॥

मात-पिता वैरी भये, जिन न पढ़ाये बाल।
हंस-समाज गये कहो, बक के कौन हवाल ॥

स्थान-परिवर्तन।

टामस लिंकन का मन कँटके प्रान्त में लगता नहीं था, क्योंकि वहां वह अपने मन की बहुतसी बातें पूरी नहीं कर सकता था। इसलिए उसने वह प्रान्त छोड़ कर दूसरे प्रान्त में जाने का निश्चय किया। उसने तुरन्त ही एक डोंगी बनाई और उसपर अपना सब असबाब इत्यादि रखकर, लड़कों-बच्चों-सहित, वह ओहायो नदी से डोंगी हांकते हुए इंडियाना प्रान्त में आ

पहुंचा । इस जल-यात्रा में एक जगह उसका डोंगी कुछ डूबसी गई, अथवा उलटी हो गई, इससे उसे बड़ी तकलीफ हुई। तो भी वे सब कुशलपूर्वक अपने नियमित स्थान पर आ पहुँचे और घर-द्वार बना कर रहने लगे। १८१६ का यह हाल है। इसीको पढ़कर अपने यहां के कंजड़ लोगों की याद आती है। उनके रहने की कोई एक जगह नियत नहीं रहती। वे सदा सिरकियों में रहते हैं और जब जहां मन होता है वहीं जा बसते हैं। पर हमारे कंजड़ों और टामस लिंकन के समान वहां के लोगों में एक बड़ा अन्तर दिखाई पड़ता है; और वह यह कि हमारे यहां के कंजड़ सचमुच ही बिलकुल अक्षर-शत्रु होते हैं और वे लोग पढ़े-लिखे होते हैं। यही कारण है कि कंजड़ प्राचीन काल से जैसे जंगली और दरिद्री होते आये हैं वैसे ही अब भी हैं; उनकी दशा बदली नहीं; और वहां के लोग, अपनी विद्या के बल से, उत्तम दशा को प्राप्त हैं।

दया का बीज।

इंडियाना प्रान्त में जिस जगह यह कुटुम्ब टिका था वहां आसपास जंगल बहुत था; और शिकार के लिए जगह बहुत अच्छी थी। परन्तु एब्राहम लिंकन को इसका शौक नहीं था। एक बार, जब वह बहुत छोटा था, उसने घर के पास जंगली बदकों का एक झुंड देखा और अपने पिता की बंदूक, जो पास ही रक्खी थी, उसे उठा कर उसने उन में से एक पक्षी मारा। दूसरे लड़के को

इतने ही से शिकार का शौक पड़ सकता था; पर लिंकन को ऐसा नहीं हुआ।

गरीब कुटुम्ब।

इस नवीन जगह में भी उस कुटुम्ब का निर्वाह न होने लगा। उन्होंने वहां एक छोटी सी झोंपड़ी खड़ी की थी। बस उसी में वे सब गुज़ारा करते। बड़ी अड़चन रहती थी। वे स्त्री पुरुष और बच्चे घास पर कुछ कपड़ा बिछा कर उस पर पड़ते और हवा इत्यादि से बचने के लिए, चमड़े के, अथवा पास के फटे-पुराने चिथड़ों के, पड़दे लगा लेते। खाने-पीने का भी ऐसा ही हाल था। पर वह सारा कुटुम्ब धार्मिक था; अर्थात् उनका पूरा विश्वास था कि ईश्वर जो कुछ करता है, अच्छा ही करता है। साथ ही उन्हें यह बड़ी भारी आशा भी थी कि परमात्मा दयालु है, और वह हमें कभी न कभी अच्छे दिन दिखावेगा। इसी लिए वे ईश्वर पर सारा भार डाल कर शान्ति से अपने दिन काटते। सच है, साधुओं की ऐसी ही रीति होती है।

होनहार विरवान के होत चीकने पात।

इंडियाना प्रान्त में आकर रहने पर टामस लिंकन को दो काम करने पड़े— एक तो झोंपड़ी बनाना और दूसरे आस-पास का जंगल काट डालना। उसे दूसरे किसी की मदद वहां न थी; इसलिए उसकी सहायता में उसकी स्त्री को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। इस विषय में एक जगह लिखा है कि उस

समय एब्राहम यद्यपि बहुत छोटा था, पर तो भी, उसकी जो एक छोटी सी बहुत प्यारी कुल्हाड़ी थी, उससे वह अपने मा-बाप की बहुत मदद करता था। पहले ही वह छोटा और फिर उसी तरह उसकी कुल्हाड़ी भी छोटी, इस कारण उस के हाथ से काम बहुत थोड़ा ही होता होगा, यह स्पष्ट है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि जब लिंकन के माता-पिता ने यह देखा होगा कि हमारा इतना छोटा बच्चा, हाथ में कुल्हाड़ी लिये हमारी मदद के लिए जुटा हुआ है और उसके गुलाबी गाल परिश्रम से और भी लाल हो गये हैं तथा पसीने से तर-बतर हो रहा है, तब तो उन्हें बहुत उत्साह मिला होगा। सच है, पुत्र वही है जो अपने माता-पिता को सुख देता है।

मातृ-वियोग-दुःखी बालक।

इस प्रकार वह छोटा, गरीब, और धार्मिक कुटुम्ब सन्तोष-वृत्ति से काल-क्रमण कर रहा था कि इतने में उस पर एक बड़े भारी दुःख का अवसर आया। वह यह कि टामस लिंकन की स्त्री, अर्थात् एब्राहम लिंकन की माता, का क्षय रोग से देहान्त हो गया। एब्राहम को इससे अत्यन्त दुःख हुआ। उसने समझा कि अब संसार में मेरे लिए कोई नहीं रहा। उन सब ने उसे अपने घर के पास ही, एक वृक्ष के नीचे, समाधिस्थ किया। वहां बैठ कर बालक लिंकन घंटों रोया करता, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। लड़के के लिए मा के समान दूसरा देवता नहीं। और उसमें

भी एब्राहम के समान सुशील लड़का तथा उसकी माता के समान स्नेहवान् और दयालु माता—उसके मरने से यदि उस बालक को सारा संसार सूना मालूम होने लगा सो बिलकुल स्वाभाविक है।

दुःख से तप की वृद्धि।

एब्राहम लिंकन की माता नहीं रही, पर उसने सदाचरण और धर्मशीलता का जो उत्तम बीज उसके अन्तःकरण में बो दिया था सो तिल भर भी कम नहीं हुआ—यही क्यों, एब्राहम ने जब यह सोचा कि हमारे आचरण का आदर्श अब हमारे सामने से चला गया है और अब उसके मुख का उपदेश हमें सुनने को नहीं मिलेगा, तब तो वह अपनी मा की सिखलाई हुई और बतलाई हुई बातें पहले से भी अधिक प्रेम और आवेश के साथ, आवश्यक समझ कर, करने लगा। अर्थात् उसके मरने से उसकी सदाचरण-तत्परता और धर्मशीलता दिन दिन और भी बढ़ने लगी। साधारणतया यह देखा जाता है कि जब कोई सिखाने पढ़ाने वाला नहीं रहता तब लड़के बिगड़ जाते हैं, पर एब्राहम लिंकन की दशा इसके विरुद्ध थी। अतएव कहना चाहिए कि वह लड़का सचमुच ही बड़ी विलक्षण बुद्धि वाला और उत्तम स्वभाव का था। रूस देश के प्रसिद्ध राजा पीटर-दि-ग्रेट के विषय में तो कहा जाता है कि उसके बिगाड़ने के अनेकों उपाय उस

एब्राहम भी ऐसा हुआ।

के पास रहने वाले लोगों ने किये तो भी उस पर कोई असर न पड़ा और वह बहुत अच्छा निकला।

सच्चा पुस्तकावलोकन-प्रेमी बालक।

एब्राहम लिंकन छुटपन ही से पढ़ने वाला बड़ा था। उस की आदत थी कि, पुस्तक हाथ में आते ही, वह उसे शुरू से अखीर तक पढ़ डालता। सो, यों ही और लड़कों की तरह नहीं, किन्तु वह, पुस्तक के विषय का अच्छी तरह विचार करता और उसकी सब से अच्छी बात, जिसे वह अपने करने योग्य समझता, उसे पूर्ण करने के लिए वह निश्चय करता। आजकल हमारे नवजवानों में पुस्तकावलोकन का चाव बढ़ रहा है, पुस्तकें वे खूब पढ़ते हैं, यह बात अच्छी है, पर अधिकांश नवजवान सिर्फ मनोरंजन के लिए पुस्तकें पढ़ते हैं, पुस्तक में लिखी हुई बातें वे अपने चरित्र में उतारने का बिलकुल ध्यान नहीं रखते। पुस्तक की अच्छी बात को समझ कर उसे अपने आचरण में उतारे बिना उसके पढ़ने से विशेष लाभ नहीं। एब्राहम लिंकन पुस्तक में पढ़ी हुई अच्छी बातों को अपने आचरण में लाकर उन्हें कार्यरूप में परिणत करने का प्रयत्न करता था। अहा! इस कठिन कार्य को जो नवयुवक कर सकता है वही धन्य है, क्योंकि क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये, सो तो संसार के बहुत लोग जानते हैं, पर उनके अनुसार आचरण करने वाले थोड़े—बहुत ही थोड़े—लाखों में एक दो

निकलते हैं। वही महा पुरुष हैं। लिंकन उन्हीं में से एक था। प्यारे नवयुवको! पुस्तकावलोकन कैसे करना चाहिये, इस विषय में आप लिंकन का अनुकरण करें।

अब यह प्रश्न सहज ही उठता है कि यह लड़का, जो इतना अच्छा निकला, उसने कौन कौन सी अच्छी पुस्तकें पढ़ी थीं। इसका उत्तर देना चाहिए। एब्राहम लिंकन के पास पुस्तकें बहुत थोड़ी थीं; पर जो थीं वे चुनी हुई थीं। उनमें बाइबल, अर्थात् उसकी निज की धर्म-पुस्तक, उसे बहुत प्यारी थी। उस पर उसकी श्रद्धा भी बहुत थी। उस पुस्तक के अनुसार चलना ही जीवन की सफलता है; यही बड़ा पुण्य है और यही मोक्ष-पद है—ऐसा उसका विश्वास था। और उसी के अनुसार वह चलता था। उस धर्म-पुस्तक में क्या कहा गया है सो यहां विस्तारपूर्वक बतलाने की आवश्यकता नहीं। इतना कहना बस होगा कि अन्य धर्मपुस्तकों की तरह उसमें भी धर्म और नीति का उपदेश है।

उसके बाद लिंकन की प्यारी पुस्तक "पिलग्रिम्स प्रोग्रेस" अर्थात् "यात्रिक-क्रमण" थी। उसमें भी धर्मनीति की शिक्षा है। मनुष्य इस संसार का यात्री है, इस विषय को लेकर, रूपक के द्वारा, बड़ा अच्छा विवेचन किया गया है। उसको पढ़ने से विचारशील मनुष्य के हृदय में प्रकाश पड़ता है; और मनुष्य-जीवन का कर्तव्य क्या है, सो अच्छी तरह मालूम हो जाता है।

उसी तरह जार्ज वाशिंगटन और बेंजमिन फ्रेंकलिन के चरित्र भी उसे बहुत प्यारे थे। ये दोनों महापुरुष अत्यन्त पवित्र आचरण वाले और स्वदेशहित के लिए आत्मबलिदान करने वाले थे, यह सब को मालूम ही है। इनके सिवाय, इसाप की नीति-कथाएं उसे बहुत प्रिय थीं। अर्थात् मतलब यह कि जिन पुस्तकों में आत्मा का हित, बुद्धि-कौशल और स्वदेशहित का विवेचन होता वही पुस्तकें वह रात-दिन बांचता और उनका मनन करता। इस प्रकार की पुस्तकों के पढ़ने में जिस का सारा बालपन गया वह पुरुष अत्यन्त श्रद्धावान्, अत्यन्त स्वदेशहितैषी निकला, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। अस्तु।

लेखन-कौशल-शील बालक।

एब्राहम लिंकन को छुटपन ही में जैसे पढ़ने का बड़ा शौक था वैसे ही लिखने का भी था। अपने मन में जो विचार आते हैं वे दूसरों पर स्पष्ट प्रकट हो जावें—ऐसा लिखना उसे बहुत अच्छा लगता था। लोगों के पत्र लिख लिख कर उसने अपना यह अभ्यास बढ़ाया। उसके गाँव में ऐसे ही लोग अधिक बसते थे जो पढ़े-लिखे नहीं थे। और उन सब को यह भी मालूम हो गया था कि एब्राहम पत्र बहुत अच्छा लिखता है। इस कारण वे सब लोग पत्र उसी से लिखाते। वह बड़े प्रेम से सब के पत्र लिखता। उसका तो अभ्यास लिखने का बढ़ता और लोगों का काम मुफ्त में होता। सब पत्रों का मतलब अलग अलग

होता था और उन लोगों की इच्छा के अनुसार मतलब दरसाना पड़ता, इस कारण भिन्न भिन्न विषयों में लिखने की उसकी शैली बड़ी सरल होगई। वाक्यार्थ की स्पष्टता के विषय में उसकी लिखावट लासानी थी। वह जो कुछ लिखता, उसको पढ़ते ही, पढ़ने वाले के मन में तत्काल वही अर्थ आता जो आना चाहिए; और का और नहीं; तथा जितना अर्थ आना चाहिए उतना ही आता; कम ज्यादा भी नहीं। यह सामर्थ्य कुछ छोटी नहीं। प्रायः अच्छे लिखे-पढ़े लोगों में देखा जाता है कि उनके मन के अन्दर का आशय कुछ और होता है और उनके हाथ से लिखे हुए शब्दों का मतलब कुछ दूसरा ही निकलता है। बहुतों को तो यही नहीं सूझ पड़ता कि हम अपने हृदय का अभिप्राय शब्दों में व्यक्त कैसे करें। ऐसी अड़चन एब्राहम को कभी नहीं पड़ी।

बालपन की शिक्षा का जीवन में उपयोग।

यह लिखने-पढ़ने का अभ्यास जो एब्राहम लिंकन ने छुटपन में किया उसका, आगे चलकर, बड़े होने पर, उसे बहुत उपयोग हुआ। कहते भी हैं कि लड़कपन में जो बातें अच्छी तरह सीख ली जाती हैं वे जीवन भर भूलती नहीं और उनसे बड़ी मदद मिलती है। एब्राहम लिंकन जब आगे चलकर अध्यक्ष चुना गया, तब अपने अधिकार के वस्त्र ग्रहण करने जिस समय वह जा रहा था, उसी समय न्यूजर्सी

में उसने एक बहुत अच्छा भाषण किया। उसमें उसने कहा था, अपने इस देश में स्वतंत्रता स्थापित करने के समय जो बड़े बड़े युद्ध हुए थे और जिनका वर्णन जार्ज वाशिंगटन के चरित्र में बड़ी सुन्दरता से किया गया है उन सब की मुझे अभी तक अच्छी तरह याद है और उनमें भी ट्रेंटन के युद्ध का वर्णन मेरे मन में जितना बस गया है उतना और कोई नहीं। इससे जान पड़ता है कि जब एब्राहम लिंकन छोटा ही था तभी स्वदेश-स्वातंत्र्य के समान गम्भीर विषय उसके हृदय में बैठ गया था और उस पर वह बहुत विचार भी करता था। इधर हमारे देश के बच्चों को छुटपन में 'स्वदेश' के बारे में कुछ भी मालूम नहीं रहता। यदि हमारे माता-पिता बालपन ही से बालकों को स्वदेश-हितैषियों के जीवन-चरित्र तथा स्वदेश-सम्बन्धी अन्य अन्य पुस्तकें पढ़ने को दिया करें तो हमारे देश में भी, लिंकन की तरह, स्वदेश के लिए आत्म-बलिदान करने वाले महापुरुष निकलने लगें। अस्तु।

बलवान्, पर साधु-वृत्ति, बालक।

पूरा पूरा हाल तो नहीं मिलता, परन्तु एब्राहम लिंकन के लड़कपन का जो वृत्तान्त मिलता है उससे जान पड़ता है कि ज्यों ज्यों वह बड़ा होता गया त्यों त्यों शरीर से आरोग्य, बहुत भारी और खासा पहलवान होता गया। वह शरीर से जैसा ऊंचा-पूरा, हृष्ट-पुष्ट, दृढ़ और बलवान् था उसी प्रकार

उसका हृदय भी बड़ा बलवान् था, चित्त निर्मल था। और पर-हित साधने में–परोपकार करने में–वह बड़ा दक्ष था। इसी कारण अपनी उम्र के अन्य लड़कों की अपेक्षा वह श्रेष्ठ समझा जाता था और लोग उसको बहुत प्यार करते थे, सभी उसे चाहते थे। क्योंकि चाहे किसी का कोई भी काम हो, वह मन-वचन-कर्म से करने को सदैव उद्यत रहता। कभी किसी से लड़ता-झगड़ता नहीं; कभी अपनी बड़ाई नहीं मारता, असत्याचरण कभी करता नहीं, और कोई कुछ भी काम बतलावे वह सदैव करने को तैयार–ऐसी उसकी साधु-वृत्ति थी, इसी कारण वह उस गाँव के प्रत्येक मनुष्य को अपना सगा भाई सा मालूम होने लगा।

एब्राहम लिंकन की माता का देहान्त हो ही गया था। सौतेली मा। कुछ दिन बाद उसके पिता टामस लिंकन ने दूसरी स्त्री से विवाह किया। वह भी स्वभाव की बड़ी अच्छी थी। वह एब्राहम की सौतेली मा थी, पर लड़के का शील देखकर वह भी उसको बहुत प्यार करने लगी। एब्राहम लिंकन भी उसकी आज्ञा को कभी न टालता। कई लोग समझते हैं कि सौतेली मा और बच्चों में नहीं बनती। ऐसे लोगों को इस बात पर विचार करना चाहिए। सच तो यह है कि सुशील सुशील ही है। वह कहीं भी रक्खा जाय, किसी की आंखों में नहीं खटकता। सब को प्यारा होता है।

प्रामाणिक बालक।

एब्राहम लिंकन बालपन ही में अत्यन्त सच्चा, विलक्षण प्रामाणिक, बड़ा ईमानदार लड़का था। एक बार की बात है, वह अपने शिक्षक ऐंड्र्यू-क्राफर्ड से रमसे-कृत वाशिंगटन-चरित्र पढ़ने के लिए लाया था। पढ़ते पढ़ते रात को उसने पुस्तक एक खिड़की में रख दी, एकाएक वर्षा आई और पुस्तक भीग कर खराब हो गई। यह देख कर उस लड़के को बड़ा खेद हुआ। पर वह डरा नहीं। तुरन्त ही पुस्तक लेकर ऐंड्र्यू क्राफर्ड के पास गया, और सारा हाल बतलाकर कहा, " इस अपराध के लिए मुझे क्षमा कीजिये, पुस्तक के खराब हो जाने से आपकी जो हानि हुई है उसे भर देने को मैं तैयार हूं, मेरे पास पैसे नहीं हैं, आप यदि मुझ से कोई काम ले लें तो बड़ा उपकार हो "। यह प्रार्थना उस महाशय ने स्वीकार कर ली। और उस पुस्तक के बदले में एब्राहम लिंकन ने ऐंड्र्यू क्राफर्ड के यहां तीन दिन घास काटने का काम किया। बात छोटी थी। पर एब्राहम लिंकन छुटपन से ही दूसरे के द्रव्य के विषय में कितना साफ रहना चाहता था, सो इस उदाहरण से स्पष्ट झलकता है। इसका नाम है प्रामाणिकता। हमारे नवजवान भी यदि इस घटना से शिक्षा ग्रहण करेंगे तो बड़ा अच्छा होगा।

दयालु, परोपकारी लिंकन।

उसकी लड़कपन की दयालुता का भी एक उदाहरण किताबों में लिखा है। वह इस तरह कि, एक दिन वह अपने कई मित्रों के साथ बाहर से घूम कर घर लौट रहा था। रास्ते में एक घोड़ा दिखाई दिया, जिसके मुंह में लगाम और पीठ पर जीन कसा हुआ, अकेला ही इधर उधर भटकता था। यह घोड़ा किसका था, सो इन लोगों को तुरन्त मालूम हो गया; और सब ने समझ लिया कि मालक, शराब से बेहोश होकर, कहीं पास ही लुढ़क रहा होगा। इधर-उधर खोज करने से सचमुच ही वह मनुष्य वहीं कहीं पास ही मरा हुआ सा दिखाई दिया। सब लोगों की राय हुई कि इसे ऐसा ही मरने दो, कौन झगड़े में पड़े, चलो अपने अपने घर। परन्तु एब्राहम लिंकन को यह बात पसन्द नहीं आई। वह उस मनुष्य को बैठा कर उसको होश में लाने का प्रयत्न करने लगा। यह देख कर उसके दूसरे मित्र अपने अपने घर चले गये। इधर एब्राहम बड़ी मिहनत से उसे "कन्धैयां लेकर" (पीठ पर लाद कर) अपने घर ले गया; वहां उसे कुछ खाने-पीने को दिया; रात भर उसकी सेवा-शुश्रूषा की; और जब वह अच्छी तरह सावधान हो गया तब उसे घर जाने दिया। इस उद्योग में उसे तकलीफ नहीं मालूम हुई; किन्तु यह समझकर, कि आज हमने एक मनुष्य की बड़ी सहायता की, उसके प्राण बचाये, उसे बड़ा आनन्द हुआ। यह

आनन्द, चाहे उसे किसी ने लाख रुपये दिये होते, तो भी न हुआ होता। सच है, सज्जनों को परोपकार में जो आनन्द आता है वह अनुपम होता है।

उद्योगी, परिश्रमी और उत्साही लिंकन।

अब एब्राहम लिंकन की अवस्था कोई सत्रह अठारह वर्ष की हुई थी। वह दूसरे लोगों को जब इतनी सहायता करता था तब अपने घर के लोगों को कितनी सहायता करता होगा, इसका अनुमान सहज ही हो सकता है। उसके मा-बाप को घर के कामों में उससे बड़ी मदद मिलती थी। वे लोग छोटा-बड़ा, कैसा ही काम उसे बतलाते, वह उसे तुरन्त करने को तैयार रहता। वह प्रत्येक कार्य इतने मन से करता कि फिर उसके मा-बाप को उस कार्य के विषय में कुछ भी चिन्ता न रहती। पीछे पीछे से उसके घर के खेतों में बहुतसा माल उत्पन्न होने लगा था। उसे बेचने के लिए वह दूसरे गावों में ले जाता। इस काम के लिए उसने स्वयं, अपने हाथ से, एक छोटीसी डोंगी तैयार की थी, उसमें माल लादकर स्वयं आस-पास के बाज़ारों में ले जाता और बड़ी मिहनत से, जांच के साथ, माल बेचकर, सब रुपया अपने बाप को ला कर देता। इसके सिवाय वह डोंगी, अग्नि-बोट पर मुसाफिर ले जाने का भी काम देती; इससे भी उसे कुछ आमदनी होती। उस समय की एक बड़ी विचित्र बात, उसने स्वयं आगे चलकर, अध्यक्ष होने

के बाद, अपने मंत्री से बतलाई। उसने कहा, " एक दिन, जब कि मैं अपनी डोंगी में नदी के किनारे चुप-चाप बैठा था, एक अग्निबोट नदी में आया; और दो मनुष्य थोड़ा सा सामान साथ लेकर, नदी के किनारे आकर, मुझ से बोले, कि हमें अगर तू उस अग्नि-बोट पर पहुँचा देगा तो हम तुझे तेरी मिहनत दे देंगे। यह सुन कर मैंने उन्हें अपनी डोंगी में बैठा कर, उनके सामान के साथ, उन्हें अग्नि-बोट पर पहुँचा दिया। तब तो वे मेरे ऊपर बड़े खुश हुए और उन्होंने मुझे दो दो रुपये दिये। रुपये पाकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और बड़ा आनन्द हुआ। मैंने अपने मन में कहा कि, देखो तो, मुझ गरीब को आज घड़ी दो घड़ी में ही चार रुपये मिल गये! दुनिया का बाजार बड़ा विचित्र है! उस समय से उद्योग करने में मेरा हौसला बहुत बढ़ गया और बड़े उत्साह के साथ मैं अपना काम-काज करने लगा। मंत्री जी! आपको कदाचित् यह बात बिलकुल क्षुद्र जान पड़ेगी; पर मेरे जीवन में इसने बड़ा काम किया। और इससे, उद्योग करने के लिए मेरे हृदय में जो स्फूर्ति आई उसका वर्णन मैं नहीं कर सकता! " ऐसी बातें तो और लड़कों के साथ भी होती रहती हैं, पर उन्हें इनसे कुछ नहीं मालूम होता, बात यह है कि वे एब्राहम लिंकन नहीं होते; अर्थात् विचार करके अपने उद्योग पर भरोसा नहीं रखते; इसी लिए ऐसी बातों से उन्हें कोई लाभ नहीं होता।

स्वावलम्बन और उत्साह चाहिए। हमारे नवयुवकों में ये बातें आजावें, फिर क्या कहना है।

सन्तोषी, परन्तु उद्योगी लिंकन।

अस्तु। उस समय एब्राहम लिंकन का पुस्तकावलोकन खूब बढ़ा हुआ था और उसे यह मालूम हो चुका था कि विचार-सम्पन्न राष्ट्र के लोग कितने सुख में रहते हैं। तथापि अपनी स्थिति पर वह कभी दुःखी नहीं हुआ। वह खूब मिहनत करता; रूखा-सूखा अन्न उसे खाने को मिलता; मोटा-झोटा उसे पहनने को मिलता; और रहने के लिए, छोटी सी झोपड़ी थी ही। इसी में वह बड़े आनन्द से रहता। सारांश, असन्तोष उसके पास तक नहीं फटकता था। हां, उद्योग और मिहनत करने में वह कभी पीछे नहीं हटता था। आलस्य तो उसको छू भी नहीं गया था। वह बड़ा दृढ़निश्चयी था। जिस काम में हाथ डालता उसे पूरा करके ही छोड़ता। यदि कोई कभी उसके मन के प्रतिकूल बात भी हो जाती तो बुरा न मानता। सुख-शान्ति और सन्तोष के साथ, श्रम, दृढ़ता और उद्योग— उसका मूल मंत्र था। बस, यही उन्नति की कुंजी है। हमारे भारतीय तरुणों को चाहिए कि परिश्रम और उद्योग से जी न चुरावें, आलस्य को मार भगावें; और सुख-सन्तोष को बढ़ावें।

बाहुबली लिंकन।

एब्राहम लिंकन जब उन्नीस वर्ष का हुआ तब उसके शरीर में काम-काज करने की खूब शक्ति आ गई। वह शरीर से सुदृढ़, भारी और बलवान् था और हृदय का सच्चा था, इस कारण जहां वह अपने मा-बाप के लिए उपयोगी था वहां पास-पड़ोस-वालों के भी उससे बहुत काम निकलते थे। वहां के सब लोगों को विश्वास हो गया था कि एब्राहम लिंकन जिस काम को उठायेगा उस में गड़बड़ कभी नहीं होगी। दूसरे एक बात और भी थी। किसी कार्य की मिहनत में जो कुछ उसे दे दिया जाता उसी में वह सन्तुष्ट रहता। ऐसी दशा में, सभी लोग अपना अपना काम उससे करवाते और उसका भी सारा समय उद्योग में व्यतीत होता। उद्योगी पुरुष के लिए इससे अधिक आनन्द की बात और क्या हो सकती है ? एक दिन उसके एक पड़ोसी ने कहा, कि अपनी डोंगी पर यह मेरा इतना अनाज रख लो, साथ में मेरे लड़के को ले जाओ और न्यूअर्लीन के पास बाजार से अनाज वेचकर उसकी कीमत लाकर हमें दो। इसके लिए वह तैयार होकर चला और बाजार के गाँव के पास जा पहुँचा। इतने में हो गई रात। इस लिये डोंगी किनारे पर बांध कर, एब्राहम और वह लड़का, जो दिन भर के थके थे, उसी डोंगी पर पड़कर आनन्द से सो गये। कुछ देर बाद सात आदमी "रेड इंडियन" (अमेरिका के मूल निवासी)

चोरी करने के लिए उसकी डोंगी के पास आये। उनके पैरों की आहट कान में पड़ते ही एब्राहम की आंख खुल गई। उसने जोर से पूछा—"कौन है ?" कुछ जवाब नहीं मिला। तब फिर उसने उसी तरह डपट कर पूछा। फिर भी जवाब नदारद !! तब तो वह तुरन्त उठकर खड़ा हो गया। और हाथ में अपना छोटासा भाला लेकर, दो तीन आदमी जो डोंगी के पास आ गये थे, उन्हें उसने खूब ही हाथ दिखाकर पीछे हटाया और उनका तथा उनके साथियों का पीछा किया। वे इंडियन लोग उसके आगे भग न सके। थक गये। तब तो उस ने उनकी खूब ही खबर ली और फिर लौट कर अपनी डोंगी में आ बैठा। एब्राहम लिंकन के साथ वह लड़का भी इंडियन लोगों से इस बार खूब लड़ा और दोनों ने मिलकर उन सब को भगा ही दिया। ये इंडियन लोग गुलाम थे और एब्राहम यदि उनके पंजे में फँस गया होता तो उसे जान से मारे बिना वे कभी न छोड़ते। पर ईश्वर की इच्छा तो यह थी कि एब्राहम लिंकन यदि इस समय इनके हाथ से बच जायगा, तो यही आगे चलकर अमरीका का प्रेसीडेंट बनेगा और इन्हीं इंडियन लोगों को गुलामी से मुक्त करके स्वतंत्रता देगा। कौन कह सकता है कि जिन सात आदमियों ने आज उस पर धावा किया था उनमें से कितनों ही की मुक्ति उसके हाथ से न हुई होगी ! अस्तु। एब्राहम लिंकन दूसरे दिन बाजार करके उस

लड़के के साथ कुशल-पूर्वक घर लौट आया और अनाज की बिक्री के दाम अपने पड़ोसी को दिये।

सर्व-प्रिय लिंकन।

इस प्रकार वह मेहनत-मजदूरी का काम करता, जो कुछ मिलता सो बाप को देता, हाथ लगता उससे पुस्तक खरीद लेता, मौका मिलने पर अन्य विषयों का अध्ययन करता, विशेष ध्यान अङ्कगणित की ओर देता, खेती के काम में बाप को सहायता करता, जो कोई मिलता-जुलता उससे कुछ न कुछ नवीन ज्ञान प्राप्त कर लेता, अपनी जानकारी बढ़ाता, और ऐसे उद्योग करता कि जिससे उसके व्यवहार-चातुर्य की वृद्धि होती, तथा जहांतक हो सकता दूसरों के काम करके उनकी प्रीति सम्पादन करता। बस, यही उसका कार्य-क्रम था। उसका स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा था, इस कारण उसके नित्य-नियम में कभी बाधा नहीं पड़ती। इन सब बातों से एब्राहम लिंकन सब लोगों को बहुत प्यारा हो गया। सब लोग यही कहने लगे, कि यह मनुष्य नहीं, देवता है; दूसरे मनुष्यों ने इसे योग्य नहीं बनाया, किन्तु यह स्वयं अपने उद्योग से इस योग्यता को प्राप्त हुआ है, और जो सद्गुण इसमें हैं वे कोई मिथ्या अथवा बनावटी नहीं, किन्तु बिलकुल स्वाभाविक तथा शुद्ध, सत्य और पवित्र हैं। वास्तव में लिंकन के विषय में लोगों का यह कथन बिलकुल सच था।

एब्राहम को अंग्रेजी भाषा का व्याकरण नहीं आता था; और परभाषाओं का एक शब्द भी वह नहीं जानता था; तो

यथार्थ ग्रन्थावलोकन

भी पुस्तकावलोकन की रुचि तथा विद्याव्यासङ्ग से उसका ज्ञान बहुत कुछ बढ़ गया था। इसका मुख्य मर्म यही था कि जो कुछ वह पढ़ता वह पूर्णतया समझ लिये बिना वह आगे नहीं बढ़ता था। अर्थात्, और लड़कों की तरह, आगे तो पढ़ते जाओ और पीछे चौपट करते जाओ--ऐसा उसका हाल नहीं था। किन्तु जैसे अत्यन्त कुशल राजा परदेश अधिकृत करता है, वैसा ही उसका ग्रन्थावलोकन था। अर्थात् जो कुछ हाथ लगे उसे तो अपने कब्जे करो और फिर आगे बढ़ो, ऐसा उसका हाल था। और ज्ञानसम्पादन का उत्तम साधन है भी यही।

इस अवस्था में उसमें एक गुण विशेष था, और वह उसके लिए बहुत हितकारक हुआ। वह गुण यही कि वह अपना

चित्त-एकाग्रता

मन, बिलकुल एकाग्रता से, चाहे जिस विषय की ओर लगा सकता था—फिर वह विषय चाहे उसका पूर्व-परिचित हो या न हो। यह गुण सचमुच बड़ा अमूल्य है। यह जिससे सध गया उसके लिये कुछ असाध्य नहीं। चित्त की एकाग्रता, सब विषयों से चित्त को हटा कर उसको एक ओर लगाना, यही तो योगाभ्यास है। महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में यही तो कहा है कि—

योगश्चित्त वृत्तिनिरोधः

यही नहीं कि परमार्थ ही में इसका उपयोग होता हो, सांसारिक कामों में भी इसकी जरूरत है। यह शक्ति जिसके पास होती है उसका सदैव यह हाल रहता है कि उद्योग में पसन्दगी नापसन्दगी वह नहीं देखता; किन्तु जिन बातों को वह अच्छा समझता है ; और जिनको वह समझता है कि मैं कर सकता हूँ, बस दृढ़निश्चय के साथ उनके करने में वह लग ही जाता है; और अपनी पूरी शक्ति लगा कर सफलता प्राप्त करता है। यह गुण लिंकन में था।

नैषगिक पावित्र्य।

दूसरा एक विशेष गुण जो उसमें था वह भी उसकी इस अवस्था में स्पष्ट दिखाई दिया। वह गुण यही कि सदैव व्यसनी लोगों के सहवास में रहते हुए एक भी व्यसन अपने पास फटकने न देना—यह गुण कोई ऐसा-वैसा नहीं। बहुत बड़ा है। मनुष्य का भला या बुरा बनना केवल सहवास का फल है—ऐसा जो एक सिद्धान्त बहुत लोगों के मुख से सदैव सुना जाता है सो जान पड़ता है, केवल साधारण श्रेणी के मनुष्यों के लिए है। एब्राहम लिंकन के समान महापुरुष, जो पृथ्वी पर कभी कभी उत्पन्न होते हैं, उनके लिए उक्त सिद्धान्त लगता नहीं। जिन लोगों के बीच में काम काज करते हुए एब्राहम का सारा समय व्यतीत होता था उनमें से अधिकांश लोग बेवक़ूफ, कर्ज़दार,

शराबी, और सदाचारण के विषय में रत्तीभर भी विचार करने वाले नहीं थे। तो भी उनका एक भी दुर्गुण एब्राहम के पास नहीं आया—इसीका नाम है नैसर्गिक पावित्र्य !

अत्यन्त सत्वशील, अत्यन्त परोपकारी, अत्यन्त मिलनसार, अत्यन्त मेहनती, और चार लोगों में बैठकर नाना प्रकार की लोकप्रिय दृष्टान्त पूर्ण बातें बतलाकर उनको अत्यन्त प्रसन्न करने वाला—ऐसा जब एब्राहम लिंकन हुआ तब गाँव के लोग उसको कितना चाहने लगे सो न पूछिये। यह हाल हो गया कि जो लिंकन कहे वही सच और सब झूठ। लोह-चुम्बक की तरह सब लोग आपही आप उसकी ओर आकर्षित होने लगे। इधर, अब उसकी अवस्था उन्नीस बीस वर्ष की होगई; और वह शीघ्रही स्वतंत्रता पूर्वक अपना निर्वाह करनें लगा। इसका वृत्तान्त अगले भाग में कहा जायगा।

चौथा अध्याय।

स्वावलम्बन पूर्वक स्वतन्त्र उद्योग।

विचारवान् मनुष्य अपना भार सहसा किसी के ऊपर नहीं डालते। उनकी सदैव यही इच्छा रहती है कि जहां स्वावलम्बन तक हो सके अपना बोझा स्वयं ही उठाया जाय, और उद्योग उसके लिए दूसरे किसी को क्यों तकलीफ दी जाय। परमात्मा ने हमको हाथ-पैर दिये हैं, बुद्धि दी है, शक्ति दी है—सो किस लिए? इसी लिए कि, अपने आप, स्वावलम्बन पूर्वक स्वतंत्र उद्योग करें; स्वयं सुखी हों, दूसरों को सुख देवें। बस, उनके सारे उद्योग इसी नीति को लिये हुए होते हैं। एब्राहम लिंकन इसी प्रकार का लड़का था। हम ऊपर कह चुके हैं कि जब वह बिलकुल छोटा था तभी से घर के कामकाज में अपने मा-बाप को सहायता करने लगा था और ज्यों ज्यों वह बड़ा होता गया त्यों त्यों उसका उत्साह इस विषय में और भी अधिक बढ़ता गया। इंडिआ प्रान्त में आने पर उसके पिता टामस लिंकन ने एक छोटासा घर बनाया।

इस काम में भी एब्राहम ने बहुत मदद की। उस समय वह खूब मज़बूत भी होगया था और उसे बढ़ई का काम अच्छी तरह आने लगा था। उसी प्रकार खेती इत्यादि के काम में भी उसकी बड़ी मदद मिलती थी। हमारे जो नवजवान घर के कामों से जी चुराते हैं और मिहनत-मजदूरी के काम को अपनी शान के खिलाफ़ समझते हैं उन्हें एब्राहम लिंकन के उदाहरण से पूरी पूरी शिक्षा लेनी चाहिए। बात तो यह है कि लड़कपन में घर के छोटे मोटे कामों के करने से ही आगे चलकर बाहर के पेंचीले कामों को सुचारु रूप से सम्पादन करने की योग्यता आती है। दूसरे, हमारे नवयुवकों को मिहनत-मज़दूरी के काम करने की भी आदत डालनी चाहिए, इसके बिना शरीर सुसंगठित नहीं होता, और जिसका शरीर मज़बूत नहीं उसको जीवन में पद पद पर धक्के खाने पड़ते हैं। मूल्य मिहनत मजदूरी के कामों का ही अधिक है। सम्पत्तिशास्त्र को देखिये, जितनी भी सम्पत्ति दुनियां में उत्पन्न होती है सब मिहनत-मज़दूरी से ही होती है। क्लर्की या मुहर्रिरी से देश की सम्पत्ति नहीं बढ़ सकती है। देखिये, इंग्लैण्ड के राजा, हमारे सम्राट्, तक को युवराजावस्था में मिहनत-मज़दूरी का काम करना अनिवार्य होता है; क्योंकि पश्चिमी देश यह समझते हैं कि सम्राट् बनने की योग्यता प्राप्त करने के लिए जहां अन्य अनेक विषयों की शिक्षा की आवश्यकता है वहां मिहनत मजदूरी

की भी शिक्षा आवश्यक है। नवयुवको! आप यदि अपने देश का उद्धार करना चाहते हैं तो कृषि-वाणिज्य-व्यवसाय में, मिहनत-मजदूरी के काम में, अमेरिका के भावी राष्ट्रपति, नवयुवक लिंकन का अनुकरण करें।

अस्तु। वे पिता पुत्र वहां इतनी मेहनत कर के बड़ी युक्ति प्रयुक्ति से घर गृहस्थी चलाते थे; पर तो भी उनके कुटुम्ब को आराम नहीं मिलता था। कुटुम्बी लोग बार बार बीमार पड़ते, उनमें से दो एक का देहान्त भी हो गया, इससे उनका चित्त बहुत उदास हुआ और सबने यही समझा कि अब फिर स्थानान्तर किये बिना हम लोगों को आराम नहीं मिलने का। ऐसी दशा जब मनुष्य को प्राप्त होती है तब उसे यही मालूम होता है कि किस दिन ऐसी जगह से उसका पिण्ड छूटे; वहां रहना ही उसे एक दुःख हो जाता है। यही हाल लिंकन के कुटुम्ब का था। तब तो टामस लिंकन ने इलिनाइस प्रान्त में जाकर रहने का निश्चय किया और उसी प्रान्त में जाने की विशेष इच्छा होने का एक कारण भी हुआ था। वह यह कि उस प्रान्त में घूम कर लिंकन का कोई रिश्तेदार आया था और उसी ने यह बतलाया था कि वहां का जल वायु बहुत अच्छा है और सिवाय इसके लोगों को काम बहुत मिलता है और गृहस्थी के लिए सब सुविधाएँ वहां मौजूद हैं। अन्तमें टामस लिंकन, अपने सारे

फिर स्थानान्तर

कुटुम्ब के साथ, इलिनाइस प्रान्त के लिए चल पड़ा। उस समय नदियां उमड़ कर चली हुई थीं और मार्ग बड़ा बिकट गया था; अतएव इस यात्रा में सब लोगों को बड़ा कष्ट हुआ। वे लोग अपना सब सामान गाड़ियों में भर कर लिए जा रहे थे। उन में से एक गाड़ी हाँकने का कार्य तो स्वयं एब्राहम लिंकनने लिया था। वे सब लोग अन्त में, जैसे तैसे करके, बड़े प्रयास से, नियत स्थान में, अर्थात् सानगामन नदी के किनारे सानगामन ही नाम के ग्राम में, जा पहुँचे। वहां फिर नवीन घर बनाने का प्रयत्न टामस लिंकन को करना पड़ा। इस काम में एब्राहम लिंकन ने बहुत सहायता की; और घर के आस पास खेती इत्यादि करने में भी उससे बड़ा काम निकला। उसने अपने हाथ से बहुत सा जङ्गल काट कर भूमि तैयार की, उसके आस पास कंटीले तारोंका सा घेरा बनाया; और प्रायः ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि उसकी पैदावारी से ही सारे कुटुम्ब का निर्वाह चलता रहे।

इसके बाद एब्राहम लिंकन के मनमें आया कि अब हम बड़े हो गये हैं; इस लिये अब हमें अपना निर्वाह स्वयं परिश्रम

आत्म निर्भरता

करके करना चाहिये। तदनुसार वे तुरन्त ही आस पास के लोगों के यहां जाकर रोजनदारी पर मज़दूरी का काम करने लगे, और अपने वस्त्र भोजन भर को धन

कमाने लगे। यह देख कर लिंकन के पिता को बड़ा सन्तोष हुआ। अपने पैरों के बल खड़ा होना और चलना जिस प्रकार मनुष्य के लिये आनन्ददायक और हितकारक है उसी प्रकार स्वावलम्बनपूर्वक अपने परिश्रम पर अपना निर्वाह कर सकना भी अत्यन्त आनन्ददायक और हितकारक है। अपने में उद्योग करने का सामर्थ्य होते हुए दूसरे के परिश्रम पर अपना निर्वाह चलाना ऐसा ही है जैसे कोई अच्छा मोटा ताज़ा दाढी मूछ वाला दूसरे के कंधे पर बैठकर छोटे बच्चे की तरह घूमता फिरता हो। यह बात तेजस्वी और विचारशील पुरुषों को कभी अच्छी नहीं लगती; क्योंकि यह बात अत्यन्त लज्जा-जनक है। हमारे जो नवजवान आलस्य में अपना समय बिताते हैं अथवा जो मनुष्य सम्मिलित कुटुम्ब के कार्यकर्त्ता पुरुष के परिश्रम पर निर्भर रहते हैं उनको इस बात का अच्छी तरह विचार करना चाहिए। हमारे इस भारतवर्ष में यह बड़ा रोग है कि बहुत थोड़े मनुष्यों के परिश्रम पर बहुत अधिक लोग गुजारा करते हैं; प्रत्येक मनुष्य मिहनत करना नहीं चाहता। जब बिना मिहनत किये ही खाने को मिलता है तब हाथ पैर कौन हिलावे-पर यह देश की अवनति का एक मुख्य कारण है। इसी से देश की सम्पत्ति-शक्ति नहीं बढ़ पाती। अन्य देशों में छोटे से बड़े तक लेकर स्त्री पुरुष सभी देश की उत्पादनशक्ति के बढ़ाने में भाग लेते हैं, कोई किसी

पर निर्भर नहीं रहता; सब स्वतंत्र रहते हैं, देश के बच्चे बच्चे के अन्दर स्वतंत्रता, स्वावलम्बन, आत्मनिर्भरता, स्फूर्ति, महत्वाकांक्षा, उद्योग, परिश्रमशीलता, इत्यादि के भाव भरे रहते हैं और वही बच्चे स्वदेश के लिए प्राण तक देने को तैयार रहते हैं, तनमनधन से उसके गौरव की रक्षा करने को तैयार रहते हैं, देश का गौरव अपना गौरव समझते हैं। वे अपने देश की उत्पादनशक्ति और सम्पत्ति-शक्ति को बढ़ा कर दूसरे देशों से सम्पत्ति और द्रव्य खींचते हैं, संसार की प्रतियोगिता में, जीवन-कलह में बाज़ी मार लेजाते हैं। हमारे देश की दुर्भाग्य से उलटी गति है; परन्तु यह उलटी गति अब बहुत दिन तक स्थिर नहीं रह सकती। देश के नवजवानो! चेतो, सारी अड़चनों को, अपनी संकल्पशक्ति और कार्यदक्षता से चकनाचूर करते हुए आगे बढ़ो और स्वावलम्बनशील राष्ट्र के लोगों का अनुकरण करो।

उद्योगी और सत्याचरणी लिंकन

अस्तु। इस नवीन स्थान में भी लिंकन के कुटुम्ब को आराम नहीं मिला। बड़ा परिश्रम करके उन लोगों ने नवीन घर बनाया, खेती-बाड़ी की, सब कुछ किया; पर कुटुम्ब के लोगों का स्वास्थ्य वहां भी ठीक न रहने लगा। बुख़ार से वे लोग बड़े परेशान रहा करते। इस लिए वे लोग वह स्थान भी छोड़ कर कोल्स प्रान्त में जा रहे। वहां भी एब्राहम

पहले ही की तरह मज़दूरी का काम करता रहा। वह शरीर से बहुत भारी, सुदृढ़ और शक्तिसम्पन्न था; काम भी अपना बड़े मन से करता; उसका काम उसके मालिक को बहुत पसन्द आता; उसका वर्ताव बड़ी नम्रता और सच्चाई का था; इनके सिवाय उसमें एक बात और थी; वह यह कि मज़दूरी के विषय में वह झगड़ा कभी न करता; और इन्हीं सब बातों से सभी लोग उसे अपने अपने काम पर बुलाना चाहते। और उसका खर्च भी भोजन वस्त्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं था; किसी प्रकार का व्यसन नहीं था, इस कारण थोड़े पैसों से भी उसका काम चल जाता। वह काम करने के लिए प्रति दिन तीन तीन चार चार कोस दूर जाया करता। यह भी बात नहीं थी कि एब्राहम अपनी मज़दूरी में नकद पैसे ही चाहता हो, किन्तु पतलूनों और बंडियों के लिए कपड़ों के टुकड़े लेकर भी वह लोगों की लकड़ियां फाड़ने का काम करता रहता था।

एक बार डेंटन ओफट नामक एक व्यापारी, एब्राहम लिंकन की प्रशंसा सुनकर उससे मिला और कहा कि तुम अपने घर के अन्य दो आदमियों के साथ यदि स्प्रिंगफील्ड में हमारे पास आओगे तो मैं तुमको अच्छा काम दूंगा। यह बात उसने स्वीकार कर ली; और तदनुसार वे तीनों उसके

यहां गये। वहां उस महाशय ने डोंगी तैयार नहीं कर रक्खी थी, इस लिए बड़ी अड़चन पड़ी। तब डोंगी तैयार करने का काम भी इन तीनों ने किया, जिसकी मज़दूरी उस महाशय ने इन तीनों को अलग दी। उस डोंगी में रख कर कुछ जंगली सुअर एक दूसरी जगह ले जाने को थे। सो बहुत से उपाय किये गये, वे डोंगी में चढ़ते ही नहीं थे, तब एब्राहम लिंकन ने उनमें से एक एक जानवर को उठाकर डोंगी में रखा। कहने का तात्पर्य इतना ही कि इस काम में लिंकन को उसके बाहुबल ने बहुत काम दिया। यदि उसकी भुजाओं में बल न होता तो आज उससे यह काम कदापि न हुआ होता। यह बल एकदम नहीं प्राप्त किया जा सकता, इस लिए तरुण मनुष्यों को पहले से ही इस ओर ध्यान देना चाहिए।

एब्राहम वह डोंगी लेकर न्यूअर्लीन्स को गया और वहां उसने अपना सब माल मालिक की आज्ञा के अनुसार बेंचा और उसके सब दाम ठीक ठीक हिसाब दिखा कर उसको लाकर दिये। इससे मालिक बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने एब्राहम को इससे भी अधिक महत्व का काम बतलाने का विचार किया। वह यह था कि न्यूसेलम में उसकी एक बड़ी कोठी थी। वहां माल बहुत था; परन्तु वहां उसका जो गुमाश्ता था वह बड़ा मूर्ख और बड़ी बुरी चाल का था उसके कारण मालिक की बड़ी हानि हुई थी; यही नहीं,

बल्कि उसके बहुत से ग्राहक उस मूर्ख गुमाश्ते के दुर्व्यवहार से छूट गये थे। मालिक को यह भय हो रहा था कि कहीं कोठी का दीवाला न निकल जाय। इस लिए उसी कोठी पर उसने एब्राहम लिंकन को नियत किया। वह वहां जाकर जब काम करने लगा तब तो थोड़े ही दिनों में वहां के सब लोगों का उस पर बड़ा प्रेम हो गया; और जो ग्राहक उस कोठी को छोड़ कर दूसरी जगह चले गये थे वे सब धीरे धीरे वापस आगये। कौन कह सकता है कि इसका मुख्य कारण एब्राहम लिंकन की सुशीलता नहीं? वह किसी को कुछ मुफ्त नहीं दे देता था; और नहीं किसी की झूठी प्रशंसा करके लोगों को भ्रम में डालता था; किन्तु उसमें प्रेम, नम्रता और सत्याचरण के अमूल्य गुण थे और इसीसे सब उसका प्यार करते थे। यहां भी उसके उक्त सद्गुणों ने ही अपना काम कर दिखलाया। सच है, सुशीलता के समान और कुछ नहीं।

यह काम करते हुये वह कितनी सचाई और ईमानदारी का वर्ताव करता था, इस बातके अनेक उदाहरण पुस्तकों में लिखे हैं। एक बार की बात है कि कोई स्त्री उस कोठी में कुछ माल लेने को आई। उसने लगभग चार साढ़े चार रुपये का माल लिया और दाम एब्राहम लिंकन को दिये। इसके बाद वह अपने घर चली

गई। दिन डूबा, रात आई; और एब्राहम लिंकन दूकान बढ़ाकर जमा खर्च मिलाने लगा। इतने पर उसे मालूम हुआ कि उस स्त्री के दो सवादो आने हमारो ओर भूलसे चले आये हैं। यह बात उसके मनको लगी। उसको चैन न पड़ने लगा। इसलिए उसने उतने पैसे जेब में डालकर दूकान बन्द की, और यद्यपि बहुत अँधेरा होगया था, तथापि, वैसे ही में ठोकरें खाते हुए, वह पैदल दो ढाई कोस उस स्त्री के घर जाकर उसने उसके पैसे लौटा दिये। तब कहीं जाकर उसके जी को चैन आई। दूसरे एक दिन की बात है कि एब्राहम लिंकन जब रात को दूकान बन्द कर रहा था, जल्दी जल्दी में एक स्त्री वहां आई और आध सेर चाय मोल लेकर दाम देकर चली गई। दूसरे दिन सुबह दूकान खोलने पर एब्राहम लिंकन देखता क्या है कि मुट्ठी भर चाय तराज़ू के पलड़े में रह गई है। यह उसे ठीक नहीं मालूम हुआ और तुरन्त ही दूकान बन्द करके वह उस स्त्री के घर गया और वह मुट्ठी भर चाय जब वह उसे दे आया तब उसके जी में जी आया। वास्तव में देखिये तो ये दोनों बातें बिलकुल क्षुद्र हैं, पर एब्राहम लिंकन के सत्याचरण को प्रकट करने के लिए बहुत पर्याप्त हैं।

उसी समय की एक और बड़ी विचित्र बात लोग बतलाते हैं। एक दिन दो तीन स्त्रियां उसीकी दूकान पर कुछ सामान लेने आईं, एब्राहम लिंकन उनसे बात चीत कर रहा था, इतने में एक नवजवान उद्दण्ड बदमाश वहाँ आया और अंडबंड

"सठ सुधरहिं सतसङ्गति पाई।

बकने लगा। लिंकन ने शान्तिपूर्वक उससे कहा कि इन स्त्रियों को एक बार निपटा लेने दो, फिर तुम क्या कहते हो सो अच्छी तरह सुनता हूँ। इस पर वह कुछ देर के लिए चुप रहा, पर ज्यों ही वह स्त्रियां जाने लगीं त्यों ही उसने फिर बकना शुरू किया। बात यह थी कि वह शठ एब्राहम लिंकन को भड़का कर उससे दो दो हाथ करना चाहता था। लिंकन के ध्यान में यह बात आ गई। और जब उसने देखा कि भलमंसी से यह नहीं मानता तब वह उसका हाथ पकड़ कर बीच रास्ते में उसे घसीट ले गया और एक धक्के के साथ उसे जमीन पर गिरा कर ऐसा पटक दिया कि क्षण भर में ही उसका मुंह कई जगह से खुरच गया और वह बिलकुल परास्त होकर दीन वाणी से रोने लगा। तब तो एब्राहम लिंकन को उस पर बड़ी दया आई। उसने अपने हाथ से उठा कर उसे बैठाया, थोड़ा सा पानी लाकर उसके मुंह को धोया और उसे सचेत किया, और जब तक उसे आराम नहीं मिला, सेवा-सुश्रुषा करता रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि वह बदमाश आदमी उस दिन से बिलकुल शुद्ध होगया, और सदाचारी बन गया। गोस्वामी तुलसीदास ने ठीक कहा है:—

शठ सुधरहिं सत संगति पाई।
पारस परसि कुधातु सुहाई॥

एब्राहम लिंकन के संसर्ग मात्र से वह शठ सुधरकर सदाचारी बन गया। उसके जीवन में एब्राहम का संसर्ग पारस का काम कर गया। आगे चल कर एब्राहम लिंकन के साथ उसकी बड़ी मित्रता हो गई। अस्तु। यहां एक बात और भी ध्यान में रखने योग्य है। एब्राहम ने उसके साथ जो यह लड़ाई की सो क्रोध में आकर अथवा उसे मारने के लिए नहीं की; क्यों कि जिस समय लड़ाई हो रही थी, उसके मुख पर क्रोध का कोई चिह्न नहीं देख पड़ता था। बात यह थी कि उसने यह कुश्ती, सिर्फ लाचारी में आकर, उस मनुष्य का हौसला पूरा करने के लिए खेली थी। जिससे उसका सुधार हो गया। सच है, सत्पुरुषों की जितनी बातें होती हैं दूसरो कों सन्तुष्ट करने और सुधारने के लिए ही होती हैं।

उसी न्यूसेलम ग्राम में एक और बदमाशों की मण्डली थी। इसे लोग निठल्लों का गिरोह कहा करते थे। इस मंडली के लोग कोई कामकाज न करके निठल्ले बैठे गप्पें मारा करते और लोगों को धूत धूत करके खाया करते। गाँव के लोग इन्हें बहुत डरते थे; क्योंकि यदि उनसे कोई विरोध करता वे उसे एकान्त में पाकर खूब पीटते। एक बात उनमें और थी। वह यह कि जब कोई नवीन आदमी गाँव में आता तो वे उसे अपने साथ भिड़ने के लिए ललकारते और कहते कि हम यह देखना चाहतें हैं कि उसके शरीर में ज़ोर कितना है।

एक बार की बात है कि उसी मंडली के एक जबरदस्त नव-जवान के साथ एब्राहम लिंकन की कुश्ती लगी। नियत समय में नियत स्थान पर यह कुश्ती हुई। उस नवजवान के साथियों ने जब यह देखा कि एब्राहम लिंकन अब उसे खूब मसल रहा है तब वे सब उसकी सहायता के लिए टूट पड़े और उन्होंने लिंकन को जबरदस्ती एक ओर मार गिराकर अपने साथी को उस संकट से बचाया। उन्होंने सोचा था कि इस प्रकार लिंकन को मार गिराने से अवश्य ही वह क्रोधित होगा और हम लोगों से लड़ने को तैयार होगा, उस समय हमलोग फिर उसकी खूब खबर लेंगे। पर उनका यह विचार सफल नहीं हुआ। लिंकन उन लोगों के साथ हँसता ही हुआ बदन झाड़ कर खड़ा होगया। और उनसे इस प्रेम के साथ वार्ता-लाप करने लगा जैसे वह भी उन्हीं लोगों का एक साथी हो! तब तो उन लोगों को बड़ा खेद हुआ; वे सब अपने तई बड़े लज्जित हुए-यही नहीं बल्कि उन सब को एब्राहम लिंकन के साथ दोस्ती पैदा करने की बड़ी अभिलाषा हुई। और वे सब एब्राहम के साथ बड़ा अच्छा वर्ताव करने लगे। लिंकन जब कभी उनसे मिलता बड़े प्रेम से मिलता; पर उनके दुर्गुणों का लेश भी उसने अपने में नहीं आने दिया। सच कहा है :— सुगन्धित पुष्प यदि एक बार दुर्गन्धित मिट्टी में भी गिर पड़ता है तो उस मिट्टी की दुर्गन्ध उसमें नहीं आती।

उपर्युक्त दुकान पर काम करते हुए, समय मिलने पर, एब्राहम लिंकन विद्याभ्यास भी करता रहता था। अँगरेजी भाषा का व्याकरण पढ़ने की उसे बड़ी अभिलाषा थी। पर उसकी कोई पुस्तक अभी तक उसे नहीं मिली थी। अब उसे पता लगा कि वहां से चार पांच कोस पर रहनेवाले एक महाशय के पास व्याकरण की पुस्तक है। वह तुरन्त ही उस महाशय के पास दौड़ा गया और वहां से पुस्तक लाकर व्याकरण सीखने लगा। परन्तु उसमें कितनी ही बातें उसकी समझ में नहीं आतीं, इसलिए, ग्रीन नामक एक वकील, जो उसके पड़ोस में रहता था, उसके साथ, मौका मिलने पर, जब वह घूमने को जाता तब वह व्याकरण की कठिन कठिन बातें, उससे पूछ लिया करता। इस प्रकार वह व्याकरण उसने अच्छी तरह पढ़ लिया, उसी समय एब्राहम लिंकन ने अपने एक मित्र से इस प्रकार कहा था:-- "सचमुच यदि शास्त्रीयज्ञान यही है तो मैं चाहे जिस विद्या का शास्त्रीयज्ञान सहज ही प्राप्त कर सकता हूँ। मुझे कुछ भी कठिनाई नहीं मालूम होती।" एब्राहम लिंकन का यह कथन बिलकुल सच है। दृढ़ निश्चय और उद्योग— ये दो ऐसी बातें हैं कि जिनसे, ऐसी कोई बात नहीं, जो साध्य न हो।

महत्वाकांक्षा का बीज।

एब्राहम लिंकन ग्रीन से अनेक प्रकार की बातें करता

था। उनमें ऐसी भी बहुत सी बातें होती थीं जिनमें लोगों की उन्नति और उनके बड़े बड़े पद पाने का जिक्र आता था। एकबार वह अपने वँश के विषय में वार्तालाप करते हुए बोला— "हमारे वंश के सब लोग बड़े बुद्धिमान थे; पर न जाने उनमें से किसीने विशेष उन्नति क्यों नहीं की और न कोई ऊँचीं पदवी तक पहुँचा। अब न जाने मेरा क्या हाल हो।" एक दूसरे मौके पर वह ग्रीन से इस प्रकार बोला— "लोग जिन्हें बहुत प्रतिष्ठित समझते हैं, ऐसे लोगों से मैंने कई बार बातचीत की है, और उनमें जो गुण होते हैं उनका भी मैंने अवलोकन किया है; पर उनमें और अन्य लोगों में कुछ विशेष अन्तर मुझे नहीं देख पड़ा।" यह सच मालूम होता है। वास्तव में सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर प्रायः सभी लोग ऐसा ही समझेंगे। बड़े लोगों में और साधारण लोगों में अन्तर सिर्फ इतना ही है कि जो महापुरुष होते हैं वे किसी बात को सिर्फ जान कर ही चुप नहीं रहते; किन्तु उसे कार्यरूप में परिणत कर दिखलाते हैं और सर्व साधारण लोग किसी बात को सिर्फ समझ कर ही चुप हो जाते हैं; बहुत कहते हैं तो उसकी प्रशंसा करते रहते हैं। अस्तु।

उन्हीं दिनों वहां अनेक छोटी छोटी सभाएँ होती रहती थीं। एब्राहम लिंकन बड़े नियम से उनमें जाया करता था, और उनमें व्याख्यान दिया करता था। उसकी आमदनी

से यद्यपि उसकी गुजर बड़ी मुशकिल से होती थी, तो भी वह एक समाचारपत्र, अनेक कठिनाइयां सहते हुए, कई वर्ष तक लेता रहा; और उसे बड़े ध्यान पूर्वक पढ़ता रहा। उस समाचारपत्र में जो राजनैतिक लेख आते थे वे उसे बहुत अच्छे लगते थे। उसे ज्ञान की पिपासा बहुत थी और इस लिए, दुकान का और अन्यबाहर का काम बड़े डौल से निपटा कर, उसीमें जितना अवसर मिलता, वह खूब ग्रन्थावलोकन किया करता था। उन्हीं दिनोंके करीब एक महाशय उससे मिला था, वह लिखता है:—"एब्राहम लिंकन, अपनी मालकिन के लड़के को पालने में झुलाते समय भी बीच बीच में पुस्तक हाथ में लेकर, बिलकुल एकाग्रचित्त से पढ़ता रहता था, यह मैंने स्वयं देखा है।" सच मुच ज्ञानसम्पादन का उत्तम मार्ग यही है। उसके लिए किसी ख़ास जगह अथवा किसी ख़ास समय की ही आवश्यकता नहीं। जैसे परमात्मा का चिन्तन—मनुष्य चाहे जहां, और चाहे जिस अवस्था में रहते हुए कर सकता है उसी प्रकार इसका भी हाल समझिये—कोई भी काम हो, लगन लगनी चाहिए। सो, जान पड़ता है, एब्राहम लिंकन को ज्ञान प्राप्त करने की लगन लगी थी।

ज्ञानजिष्णु और सद्गुणी लिंकन।

यह तो सब ठीक था; पर जिस व्यापार में लिंकन की नौकरी लगी थी वह व्यापार, एक आलसी और अनियमित

मनुष्य की मूर्खता से, बिगड़ गया। सो ऐसा बिगड़ा कि थोड़े ही दिनों में लिंकन की नौकरी छूटगई और लाचार उसे घर बैठना पड़ा। यद्यपि वह ऐसी दशा में आगया; पर इस समय उसकी योग्यता बहुत बढ़ गई थी। वह अपनी भाषा के व्याकरण में प्रवीण होगया था। बड़े बड़े ग्रन्थकारों के बड़े बड़े ग्रन्थ पढ़कर उसने विपुल ज्ञान सम्पादन कर लिया था। इससे उसके आचरण में सरलता, सत्यशीलता, सूक्ष्मदर्शिता और न्याय से चलने की दृढ़ता, इत्यादि सद्गुण बहुत बढ़ गये थे। इस लिए लोग उसका बहुत गौरव करते थे; और जब कहीं कोई वाद-विवाद आपड़ता तब सब लोग यही समझते कि इसका जो निपटारा लिंकन करेगा वही ठीक होगा। यह सन्मान कुछ साधारण नहीं है। सम्पत्ति इत्यादि वस्तुओं के बल पर जो सन्मान प्राप्त किया जाता है वह सन्मान सच पूछिये तो उस मनुष्य का नहीं होता; किन्तु उस वस्तु का होता है। इस प्रकारका बाह्य साधन लिंकन के पास कुछ भी नहीं था। ऐसी दशा में उसके पास जो योग्यता थी वह उसके निजके सद्गुणों की थी—अर्थात् एक प्रकार वह उसकी निज की थी। और वास्तव में मनुष्य की सच्ची योग्यता ऐसी ही चाहिए।

पांचवां अध्याय ।

भाग्योदय ।

उन्नति का अवसर, ब्लेकहाक का वृत्तान्त ।

जब तक कोई अवसर आकर न पड़े, मनुष्य के गुणों की परीक्षा नहीं होती। अत्यन्त अपमान सहने के अनेक अवसर यदि युधिष्ठिर पर न आये होते तो उनकी अप्रतिम सहनशीलता संसार को कैसे मालूम होती। इसी प्रकार अमेरिका की स्वतन्त्र रियासतों में, लिंकन के समय, यदि भिन्न भिन्न प्रकार के अनेक कठिन प्रसङ्ग न आये होते तो उसके कितने ही सद्गुण, बिलकुल प्रकट न होते हुए, जहां के तहां ही विलीन हो जाते। परन्तु भाग्यशाली पुरुषों को, बिना किसी प्रयत्न के, सहज ही, ऐसे अवसर प्राप्त हो जाते हैं, जिनके कारण उनकी उन्नति होती रहती है। एब्राहम लिंकन के विषय में भी ऐसा ही हुआ। उसका मुख्य वृत्तान्त इस प्रकार है :—

यूरप के लोगों ने यद्यपि उत्तरी अमेरिका में जाकर बड़े प्रयास से बस्तियां कीं और राज्य स्थापित किये; तथापि आगे चल कर कई वर्षों तक वहां के असली निवासी जङ्गली

लोग, अपने जङ्गलों से झुंड के झुंड आकर उनके प्रदेश में दङ्गा मचाने और उन्हें तङ्ग करने लगे। हमारे देश के पिंडारियों कासा उनका भी हाल था। उनमें से स्याक नामक एक जाति के लोग थे। वे मिसीसिपी नदी के पश्चिमी किनारे की ओर रहा करते थे; और उनका मुख्य सरदार ब्लेकहाक नामक था। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ ही में एक ऐसी सुलह हो गई थी कि वे लोग सदा अपनी सीमा में रहें; और मिसीसिपी नदी के इधर न आवें। ब्लेकहाक उस सन्धि का भंग करके सन् १८३० में, अपने तीन चार सौ लोगों के साथ, मिसीसिपी नदी उतर कर इस पार आया और यूनाइटेड स्टेट्स प्रजासत्ताक राज्य के अधिकृत प्रदेश में दंगा मचाने लगा। उस समय उस प्रान्त का गवर्नर रेनाल्ड्स था और सेनापति गेन्स था। उन्होंने बड़ी शीघ्रता से अपनी सेना एकत्र करके उससे सामना करने के लिए भेजी। तब तो ब्लेकहाक बहुत डरा और अमेरिकन लोगों से सन्धि करना स्वीकार किया। उसका कथन यूनाइटेड स्टेट्स की सरकार ने मान लिया। उस समय ब्लेकहाक ने यह स्वीकार किया कि मैं पूर्व की सन्धि के अनुसार ठीक ठीक चलूंगा; उसमें कुछ भी अन्तर न पड़ने दूंगा।

उस समय तो यह टंटा मिट सा गया; पर वास्तव में यह सब धूर्तता थी। ब्लेकहाक पूरा पूरा तैयार न था; और वह

अपनी तैयारी अच्छी तरह करना चाहता था, इसीलिए उसने यह सब स्वीकार कर लिया था। जब वह अपनी तैयारी पूरी पूरी कर चुका तब, सन् १८३२ में, वह फिर मिसीसिपी नदी पार करके इस तरफ़ आया। इस समय उस प्रान्त का सेनापति एट्किन्सन था। उसने उसे धमकी का सन्देशा भेजा। उसने भी बड़ी उद्दण्डता के साथ उसका उत्तर दिया। तब अवश्य ही वह सेनापति और गवर्नर रेनाल्ड्स अपनी सेना की तैयारी में लगे। उन्होंने प्रारम्भ ही में यह घोषणा की कि इस समय सरकार को सेना की बड़ी आवश्यकता है; और उसमें वालंटियर* (स्वयंसेवक) सेना भी रखी जायगी। इसलिए जिनकी इच्छा वालंटियर होने की हो वे नियत स्थान में अधिकारियों के पास उपस्थित हो कर अपने नाम दर्ज करावें। जिस समय यह घोषणा निकली, एब्राहम बिलकुल खाली बैठा था। इसलिए न्यूसेलम गावँ के कुछ अन्य लोगों

* बड़े बड़े राष्ट्रों की सेना में, प्रजा में से कुछ लोग, स्वदेशरक्षा के लिए, अपनी खुशी से, नाम लिखाते हैं। ये राजभक्त लोग सरकार से कुछ वेतन नहीं लेते। यही नहीं, बल्कि अपने खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने शस्त्र-अस्त्र, इत्यादि का खर्च भी अपने पास ही से करते हैं; जिनके पास ऐसा डौल नहीं होता उनके लिए सारा प्रबन्ध सरकार भी कर देती है। ये लोग स्वराज्यरक्षा के लिए, मौका पड़ने पर वीरता दिखलाते हैं। ऐसी सेना के विभाग को 'वालंटियर' सेना कहते हैं। हमारी

के साथ उसने अपना नाम भी वालंटियरों में दाखिल करा दिया। उन लोगों में उस बदमाश दल के भी कई लोग थे जिसका उल्लेख, एब्राहम लिंकन के सम्बन्ध में, पीछे हो चुका है। वे सब एब्राहम के बड़े मित्र हो गये थे। उस पर उन लोगों की बड़ी भक्ति हो गई थी। उन सब ने यही कहा कि हमारे गिरोह का अधिकारी, अर्थात् कप्तान, एब्राहम लिंकन होना चाहिए, पर एब्राहम लिंकन ने स्वप्न में भी उस अधिकार की इच्छा नहीं की थी; क्योंकि यह बात उसके मन में कभी नहीं आई थी कि इस प्रकार का अधिकार चलाने की शक्ति भी उसमें है। साथ ही एक बात और भी बड़ी

सरकार ने भारत में भी यह नियम, कई वर्ष से चला रखा है; और आजकल 'जर्मनवार' में तो सब राष्ट्रों में यह नियम तेजी से चल रहा है। पर हमारी सरकार ने, अभी तक हमारे देश की सब प्रजा को यह अधिकार नहीं दिया है; सिर्फ योरोपियन, पार्सी और देशी ईसाइयों को ही दिया है। कारण स्पष्ट है, अन्य धर्मों के लोगों की राजभक्ति पर सरकार को विश्वास नहीं है। कुछ भी हो, यदि सरकार सारी प्रजा को यह अधिकार देदे तो देश में शूरता की जागृति हो सकती है; और सरकार को भी अपने शत्रुओं को पराजित करने में विशेष मदद मिल सकती है।

नोट—७ फरवरी सन् १९१७ को लार्ड चेम्सफोर्ड ने युद्ध काल भर के लिए सारे भारतीयों को स्वयंसैनिक बनने के अधिकारकी घोषणा की।

विचित्र थी। वह यह कि उन वालंटियरों में कर्कपेट्रिक नामक एक पुरुष था। वह बड़ा प्रतिष्ठित और गौरवशाली था। उसको कप्तान बनाने के लिए भी उस गिरोह में से कई लोग आग्रह कर रहे थे। इसके सिवाय एक बात यह भी थी कि एब्राहम लिंकन पहले एक बार उस कर्कपेट्रिक के यहां नौकर भी रह चुका था; और कर्कपेट्रिक बड़े कर्कश स्वभाव का आदमी था; बिना कारण उससे कष्ट पाने के कारण एब्राहम लिंकनने उसकी नौकरी छोड़ दी थी। यह मौका तो देखिये कि, उन दोनों का वह पहले का सम्बन्ध अब एक ओर रहा, और उन्हीं दोनों में से किसी एक को अधिकारी बनाने का समय आगया! ऐसी दशा में निसन्देह कर्कपेट्रिक के समान अभिमानी पुरुष के सामने बड़ा कठिन मौका आया होगा और एब्राहम को पीछे रख कर स्वयं आगे बढ़ने के लिए उसने बड़ा प्रयत्न किया होगा।

सर्वप्रिय कप्तान लिंकन।

पर उससे वह बना नहीं। उस समय यह चाल थी कि वालंटियर सेना में जो अधिकारी नियत किये जाते थे। वे सेना के लोगों के बहुमत से किये जाते थे। वह बहुमत देखने की रीति भी उनकी बहुत अच्छी थी। तदनुसार सब वालंटियर लोग एक जगह जमा हुए। इसके बाद एब्राहम लिंकन और कर्कपेट्रिक को वहां बुला कर दोनों ओर खड़ा किया; और सेना के लोगों से कहा कि जो जिसको चाहता हो वह उसके पास जा कर एकदम खड़ा हो जाय। यह सुनते ही अधिकांश लोग–अर्थात् लगभग ८०। ९० फीसदी लोग–एब्राहम लिंकन के पास जाकर खड़े हो गये। और जो दस बीस फी सदी लोग

कर्कपेट्रिक के पास गये थे वे भी, अन्त में लज्जित होकर एब्राहम लिंकन की ओर आ मिले। अर्थात् वालंटियर सेना के सब लोग एब्राहम लिंकन के ही पास आगये; और कर्कपेट्रिक बिचारा निराश होकर, मुँह बनाये और गर्दन नीची किये हुए अकेला ही खड़ा रह गया। उस समय उसे कितना बुरा मालूम हुआ होगा सो उसी से पूछना चाहिए। अस्तु। एब्राहम लिंकन, आगे चलकर, उच्च पद पाने पर भी प्रायः कहा करता कि इस चुनाव से मेरे हृदय को जो आनन्द हुआ उसका आधा भी आगे चल कर किसी मौके पर नहीं हुआ।

इस प्रकार एब्राहम लिंकन जब कप्तान हो गया तब उसकी, तथा आस पास इसी प्रकार तैयार हुई अन्य सेनाओं को, बेर्डस्टौन जाने का हुक्म हुआ। यह स्थान इलिनाइस नदी के किनारे पर है। वहाँ जाने पर एब्राहम लिंकन और जान स्टुअर्ट की भेंट हुई और उनकी मित्रता का प्रारम्भ हुआ। जान स्टुअर्ट वकील था; और वह भी एब्राहम लिंकन की तरह स्वयं सेवक सेना में भरती हो कर आया था। उसने लिंकन के बारे में लिखा है कि, "वह अपने सैनिकों को प्राणों से अधिक चाहता था; वह स्वभाव से ही अत्यन्त मिलनसार था; और वह नाना प्रकार की बातें बड़ी मनः-रंजकता के साथ बतला सकता था; इस कारण सब लोग उसे बहुत चाहते थे। इसके अतिरिक्त उसका शरीर भी अच्छा था। वह बड़ा प्राण्डील और अच्छा कुश्तीबाज था। एक दिन भी ऐसा नहीं जाता था जिस दिन उसकी कुश्ती का आनन्द लोग न लूटते हों। सारी सेना में उसकी बराबरी

का, टामसन को छोड़ कर, अन्य कोई मनुष्य नहीं था। और टामसन का भी यह हाल था कि वह जो अपनी बराबरी वालों को मारता सो सिर्फ दावँ पेचों से-शारीरिक-बल उसमें भी बहुत नहीं था। सारांश, वह जितनी सेना जमा हुई थी उसमें एक भी मनुष्य, वास्तव में, शारीरिक-बल से एब्राहम की बराबरी का नहीं था। देखने में भी वह अच्छा था। इन सब बातों से लोगों में उसका बड़ा मान था।" कुश्ती में दाँव पेंच भी एक कौशल है और यह अच्छी बात है। परन्तु शरीर में बल न होने के कारण उसका उपयोग किया जाता है। अर्थात् शारीरिक-बल का महत्व उससे कहीं बड़ा है।

यह वालंटियर सेना वर्डस्टैान से चल कर, सरकार के आज्ञानुसार, राक नदी के उद्गम की ओर बढ़ी। उसका मुख्य अधिकारी ह्वाइट साइड था। प्राफेट्स्टैान नामक मुकाम पर सरकारी सेना से उसके मिलने का निश्चय हुआ था। परन्तु ह्वाइट साइड ने वहाँ आकर, सरकारी सेना की बाट देखने की परवा न करते हुए उस गांव को जला डाला और आगे बढ़ कर वह डिक्सनफेरी में जा पहुंचा। इस यात्रा से उन सबको बहुत कष्ट हुआ। परन्तु एब्राहम लिंकन को कुछ भी नहीं जान पड़ा; क्योंकि उसे भूख प्यास सहने और खूब परिश्रम करने की आदत पहले ही से पड़ी हुई थी।

ब्लैकहाक पर चढ़ाई; और अन्तमें उसका पराजय।

वालंटियर सेना की छावनी जब कि डिक्सनफेरी में पड़ी हुई थी तब सरकारी सेना का एक दल बड़ी घबड़ाहट से वहां आकर मिला; क्योंकि ब्लैकहाक की सेना ने उसको

पराजित करके भगा दिया था। वहां तुरन्त ही सब सेनाधिकारियों की एक सभा हुई; और ब्लैकहाक की सेना पर एक दम हम्ला करने का निश्चय किया गया। तदनुसार सारी सेना ने चढ़ाई की; परन्तु ब्लैकहाक को यह खबर पहले ही से मिल गई थी, इस लिए उसके सब लोग वहां से भग गये थे। अतएव सरकारी सेना का वह परिश्रम बिलकुल व्यर्थ गया।

इसके बाद वालंटियर सेना के साथ कुल चौबीससौ सरकारी सेना ने ब्लैकहाक पर चढ़ाई करके उसको पराजित करने का विचार किया। परन्तु इतने ही में वालंटियर लोगों की अवधि समाप्त होगई; और वे आगे बढ़ने से आनाकानी करने लगे; क्योंकि अपने अपने घर जाने की उन सबको बड़ी इच्छा थी। बिना राजी के, अवधि से अधिक न रखने का करार पहले ही हो चुका था, इस कारण उन सबको रोकना सरकार को उचित नहीं जान पड़ा। इसलिए तुरन्त ही उन सबको रजा दे दी गई, परन्तु ब्लैकहाक को पराजित करना अभी तक वैसा ही बाकी था। अतएव नवीन वालंटियर भरती करने की घोषणा भी तुरन्त दे दी गई; और उसमें यह भी प्रकट कर दिया गया कि पहले वालंटियरों में से जो लोग अपनी खुशी से फिर वालंटियर होंगे उनको भी सरकार स्वीकार करेगी। इधर एब्राहम लिंकन को फिलहाल कोई दूसरा उद्योग नहीं था; इसके सिवाय उसने यह भी समझा कि जिस कार्य के लिए हम वालंटियर हुए उस कार्य को सिद्ध किये बिना चला जाना अच्छा नहीं; इस लिए उसने अपना नाम फिर वालंटियरों में लिखा दिया। व्हाइटसाइड भी नवीन वालंटियरों में दाखिल होगया।

इसके बाद गैलेना, वरओकग्रोव इत्यादि स्थानों में दोनों दलोंकी लड़ाइयां हुई। उनमें वालटियर लोग बहुत थक गये; और उनमें से अनेक लोग सेना छोड़कर चले भी गये। परन्तु एब्राहम लिंकन अपना कर्तव्य बहुत अच्छी तरह बजाता रहा। कुछ समय बाद बाडशाक्स नामक स्थान पर दोनों दलों में बड़ी भारी लड़ाई हुई और उसमें ब्लेकहाक बिलकुल पराजित हो गया। उसके साठ मनुष्य लड़ाई में काम आये और बहुत से घायल हुए। उसकी सेना के शेष मनुष्य मिसिसिपी नदी के उस पार भाग गये। और ब्लेकहाक स्वयं, अपने मुख्य योद्धाओं सहित सरकारी सेनापतियों के द्वारा पकड़ा गया। इस प्रकार इस चढ़ाई का अन्त हुआ।

'कांग्रेस' के चुनाव में लिङ्कन का नाम

बादको लिंकन अपने साथियों सहित वहां से अपने गाँव को लौट आया। इसी समय के लगभग उस प्रान्तमें एक बड़ी गड़ बड़ मची हुई थी। अर्थात् राज्य प्रबन्ध करने के लिए उस देशमें जो कांग्रेस नामक सभा नियत की जाती है उसके सभासदों के चुनाव का काम होरहा था। इस सभा में स्थान प्राप्त होना बड़े गौरव की बात समझी जाती है, इसलिये उसे प्राप्त करने के लिये बड़े बड़े लोग उद्योग में लगे थे। वे लोग जी जान से इस बात का बड़ा प्रयत्न कर रहे थे कि किसी न किसी तरफ से, लोग हमारे लिये बहुत सी सम्मतियां देकर, हमें उस सभा के लिये अवश्य चुने। अपना धन, अपना गौरव, अपना प्रभाव, इत्यादि सब प्रकार के उपायों की योजना उन लोगों ने की थी। इसलिए चारों ओर इसी की धूम धाम मची हुई थी। ऐसी दशा में लिंकन बिचारे को कौन पूछता था? क्योंकि उपर्युक्त

साधनों में से एक साधन भी उस विचार के अनुकूल न था। परन्तु मनुष्य का सच्चा बड़प्पन जो होता है उसका प्रभाव कुछ दूसरा ही होता है। उसकी तेजस्विता के सामने अन्य सारे उपाय फीके पड़ जाते हैं। यही हाल इस अवसर पर हुआ। लिंकन ने स्वयं उसके लिये कुछ भी उद्योग नहीं किया; और यह बात स्वप्न में भी उसके ध्यान में न थी कि इस प्रकरण में उसका नाम भी कोई लेगा। परन्तु छोटे बड़े सब लोगों का उसके विषय में विश्वास था कि वह बड़े उदार हृदय का पुरुष है, और स्वार्थ की अपेक्षा परोपकार की ओर उसका विशेष ध्यान रहता है; वह सच्चा धर्मात्मा है और जो काम वह उठावेगा उसे मनसा-वाचा कर्मणा से वह पूरा करेगा; इसके सिवाय सब लोग उसे चाहते भी थे; इस कारण उसे चुनने के लिए अन्य लोगों से बहुत अधिक, अर्थात् २७७ सम्मतियां उसे प्राप्त हुईं। तब तो सभी को बड़ा आश्चर्य हुआ। सच पूछिये तो सच्चा सोना खरा ठहरा, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी।

इस प्रकार लिंकन को सभासद चुनने के लिए यद्यपि बहुत सी सम्मतियाँ प्राप्त हुईं, तथापि, अन्त में सम्पूर्ण प्रान्त के लोगों के चुनाव की गड़बड़ी में उसका नाम पीछे रह गया। परन्तु इस विषय में स्वयं उसे कुछ भी विषाद नहीं हुआ। हाँ, उसके चुनाव के लिए जिन लोगों ने इतना प्रयत्न किया था। उन लोगों को अवश्य कुछ खेद हुआ। अस्तु।

उस समय एब्राहम लिंकन को कोई काम धंदा नहीं था। इस लिए अब वह इस विचार में पड़ा कि अब आगे क्या उद्योग करना चाहिए। ऐसी अवस्था में अनेक विघ्न आते हैं।

उनमें से एक बड़ा विघ्न यह है कि मनुष्य यह सोच कर घब-

एक व्यापार में धोका

ड़ाने लगता है कि अमुक व्यापार हम से होगा या नहीं और इसके करने से हमारा निर्वाह होगा या नहीं, तथा यह हमारी योग्यता के अनुकूल है या नहीं और इसके करने से हमारी मानहानि तो न होगी, इत्यादि। हमारे देश के भी आज कल प्रायः नवयुवकों का यही हाल हो रहा है। ये लोग जब स्कूल-कालेजों से विद्याध्ययन करके पदवीधर होकर निकलते है तब ये समझते हैं कि हम कोई बड़े भारी आदमी हो गये और उस समय कोई साधारण काम करने में इन्हें बड़ी लज्जा आती है। इधर बड़े बड़े काम तो अब प्रायः किसी को मिलते नहीं, इस कारण इन बिचारों को वर्षों निरुद्योगिता में रहना होता है। वास्तव में यह उनके अविचार और चंचलता का फल है। परन्तु एब्राहम लिंकन का यह हाल नहीं था। वह सेना में कप्तान की पदवी तक पहुँचा था और राज्य प्रबन्ध कारिणी सभा में नियत होने तक की योग्यता वह रखता था, तथापि अभिमान तो उसे छू भी नहीं गया था। यह बात कभी भी उसके मन में न आई कि हम कोई बड़े आदमी हैं। उसे सदैव यही मालूम होता रहा कि हम वही हैं जो पहले थे, उसमें कुछ भी अन्तर नहीं पड़ा। इस लिए अपने निर्वाह के लिए किसी व्यापार में भी वह कोई प्रत्यवाय नहीं समझता था। और इसी लिए अब उसने लोहार का धंदा स्वीकार करने का निश्चय किया।

तदनुसार वह लोहार अवश्य होगया होता; परन्तु इसी बीच में एक घटना ऐसी होगई कि जिसके कारण उसे अपने सारे विचार बदलने पड़े और वह एक निराले ही व्यवसाय के

मार्ग में पड़ गया। वह घटना इस प्रकार थी। न्यूसेलम गाँव में रेडफोर्ड नामक एक बड़ा दूकानदार रहता था। उससे वहां की बदमाश-मंडली से अनबन होगई थी सो यहां तक कि उस मंडली से हैरान होकर वह अपनी दूकान तक बन्द करने को तैयार होगया और अपना बाकी बचा हुआ माल बेच डालने के लिए कोई ग्राहक देखने लगा। वहां ग्रीन नाम का एक महाशय रहता था, वह लिंकन का बड़ा मित्र था, उसने वह सारा माल सौ डालर में खरीद लेना चाहा, और इधर लिंकन को कोई काम धाम था ही नहीं सो उसे उस माल की सूची बना डालने के लिए कहा। लिंकन ने जब माल को देख भाल कर उसकी सूची तैयार की तब मालूम हुआ कि उस दूकान में कम से कम छै सौ डालर का माल मौजूद है। इस लिए बेरी नामक एक मनुष्य को हिस्सेदार बना कर लिंकन ने वह सारा माल एकदम सवा सौ डालर में ग्रीन से मोल ले लिया। उस व्यापार में बेरी ने लिंकन को बड़ा धोखा दिया। यहां तक कि, लाभ होने की बात तो एक ओर रही, लिंकन को उससे बहुत हानि उठानी पड़ी। इसके सिवाय बेरी का ऋण जो उसके मत्थे रहा सो अलग ही। परन्तु लिंकन की सत्यशीलता और उसकी प्रामाणिकता ग्रीन को अच्छी तरह मालूम थी। इस लिए उसने इस अवसर पर द्रव्य के द्वारा उसे अच्छी सहायता की; और उस अड़चन से उसे बचाया। ग्रीन नहीं चाहता था कि यह द्रव्य लिंकन फिर उसे लौटा देवे; और इसी लिए उसने उसका कुछ हिसाब-किताब भी नहीं रखा था। इसके सिवाय वह उस गाँव से निकल कर टेनेसी नामक गाँव

में जा बसा था। परन्तु, इधर लिंकन ने यह निश्चय किया था कि यह ऋण अपने मत्थे नहीं रहने देना चाहिए और उसे अवश्य चुकाना चाहिए। तदनुसार ज्यों ही उसे फिर अच्छी दशा प्राप्त हुई त्यों ही उसने, कोई छै वर्ष बाद, वह सारी रकम ब्याज सहित, ग्रीन को दे दी और संकट के समय जो सहायता उसने की थी उसके लिए बड़ी कृतज्ञता प्रदर्शित की। ऐसी प्रामाणिकता की जितनी प्रशंसा की जावे, थोड़ी है। एब्राहम लिंकन अपने जिन गुणों के कारण उच्च पद प्राप्त कर सका उनमें उसकी प्रामाणिकता मुख्य थी। यह गुण इस पुरुष के लिए जब इतना उपयोगी हुआ तब क्या दूसरों के लिए वह न होगा? होगा। अवश्य होगा। पर हाँ, उसके लिए श्रद्धा अवश्य चाहिए।

पोस्टमास्टर लिंकन

इसी समय के लगभग वहाँ की सरकार ने एब्राहम लिंकन को उस गाँव की पोस्टमास्टरी का काम दिया। यह काम जो उसे दिया गया सो सिर्फ इसी कारण कि उसकी प्रामाणिकता (ईमानदारी) प्रसिद्ध थी और उस गांव में यह एक ही मनुष्य था जो डाकखाने के कागज-पत्र भी तैयार कर सकने योग्य काम जानता था। यह पोस्टमास्टरी का काम भी लिंकन ने बड़ी उत्तमता और श्रद्धा के साथ किया। इसके लिए वेतन उसे बहुत ही थोड़ा इतना थोड़ा कि निर्वाह भी कठिन-मिलता था। इस कारण सारा समय डाक घर में ही लगाने से उसका काम न चलता था। दूसरे उद्योग के लिए उसे इधर उधर भी घूमना पड़ता था। परन्तु इस बात की वह बड़ी चिन्ता रखता था कि हमारी इस अनुपस्थिति से लोगों को कोई असुविधा न होने पावे। और इसके लिए वह ऐसा

करता कि डांक से आई हुई सारी चिट्ठियां वह सदैव अपनी टोपी में, साथ रखता था। इससे लोगों को पत्र इत्यादि समय पर मिलने में कोई असुविधा न होती थी। अर्थात् लिंकन से जहाँ भेट हो जाती वहीं लोगों का डाकघर का सा काम अनायास हो जाता। उसका बर्ताव बड़ा चोखा था। इस कारण उसकी कार्यप्रणाली लोगों को बड़ी पसन्द जान पड़ती थी। डाक के काम का जो द्रव्य उसके हाथ में आता उसे वह बिलकुल अलग रखता था और द्रव्य-सम्बन्धी चाहे जितनी कठिनाई आवे, उसे वह अपने निजी कार्य में कभी खर्च न करता था। इस विषय में एक बड़ी विलक्षण बात लिंकन के एक चरित्रग्रन्थ में लिखी है। वह यह है कि उसने पोस्टमास्टरी का काम जिस समय छोड़ा उस समय डाक के कुछ रुपये उसके पास बाकी थे। बात यह थी कि उन रुपयों का हिसाब न मिलने के कारण वह उन्हें डाकघर में जमा नहीं कर सका था। इसलिए वह द्रव्य, वैसा ही पुड़िया में बाँध कर, उसने अपनी टोपी में रख लिया था। कई वर्ष बाद, जब एब्राहम लिंकन वकील हो गया, वह भूल हिसाब में निकली और निश्चय हुआ कि यह रकम लिंकन से ली जावे। तदनुसार उस विभाग का एक कर्मचारी, वह सब हिसाब लेकर, उक्त रुपया वसूल करने के लिए, लिंकन के पास पहुँचा। उस समय वह अपने आफिस में बैठा हुआ वकालत की मिसलें उलट-पुलट रहा था। उक्त कर्मचारी ने वहाँ पहुँच कर ज्यों ही वह हिसाब उसके सामने रखा त्यों ही लिंकन ने अपनी टोपी उठा कर, ठीक उतने ही रुपयों की एक पुड़िया उससे निकाल कर उसके आगे रख दी। यह देख कर उस कर्मचारी को और पास बैठे हुए लोगों को

अत्यन्त आश्चर्य हुआ। वह रकम उसके पास ही रहती थी और ऐसे अनेक मौके उसे आये थे कि जब उसके पास एक पैसा भी न था और आवश्यक पदार्थ उसे लेने ही थे। परन्तु लिंकन ने वह द्रव्य एक घड़ी के लिए भी अपने निजी में नहीं लगाया! उस द्रव्य पर सरकार का पहरा न था; और यदि लिंकन ने आवश्यकता पर उसे थोड़ी देर के लिए खर्च भी कर लिया होता तो कोई बात न थी। परन्तु उसकी आत्मा वैसा नहीं कहती थी और उसके विरुद्ध चलना वह पाप समझता था। बस यही बात थी। लिंकन ने जो इतनी उन्नति की, उसका रहस्य इसीमें है।

पैमाइश का काम मिला।

अस्तु, इसके बाद लिंकन फिर कुछ दिन के लिए निरुद्योग होगया। परन्तु शीघ्र ही जानकालहोन नामक एक महाशय ने उसे अपने यहाँ एक छोटा सा, जमीन की पैमाइश का काम दिया। यह काम उसे आता न था; क्योंकि जिस गणित के आधार पर यह कार्य होता है वह उसने सीखा ही न था। परन्तु धन्य है लिंकन के उद्योग को कि उसने तुरन्त ही बड़े प्रयत्न से गणित और पैमाइश के काम की अनेक पुस्तकें प्राप्त कीं और खूब परिश्रम के साथ उनका अध्ययन कर के बहुत जल्द वह कार्य उत्तमता से करने लगा। महापुरुषों ने जो यह कहा है कि दृढ़ संकल्प शक्ति में बड़ा भारी बल होता है सो लिंकन के चरित्र में पद पद पर देखा जाता है।

ऊपर इस बात का उल्लेख हो चुका है कि बेरी नामक जिस व्यक्ति ने लिंकन के साथ व्यापार में धोखा दिया था

उसका ऋण भी लिंकन को ही देना था। अब, जिस समय कि वह पैमाइश का काम करता था, उसके एक महाजन ने, कुर्की लाकर, लिंकन का सारा माल-असबाब कुर्क करवा लिया। उसमें उसका कम्पास और पैमाइश की जंजीर भी चली गई; इससे कुछ दिनों के लिए उसका काम ही बन्द हो गया। परन्तु जानशार्ट नामक एक सज्जन ने जब यह वृत्तान्त सुना तब उसे लिंकन की इस दशा पर बड़ी दया आई और उसने वे दोनों वस्तुएं उस महाजन से खरीद कर एब्राहम लिंकन को दीं। सच है, परमात्मा अपने भक्तों को किसी न किसी रूप में सहायता किया ही करता है।

छठवाँ अध्याय।

सार्वजनिक कार्यों में प्रवेश।

अपना निज का हित और अपने कुटुम्ब का हित तो छोटे बड़े जीव जन्तु और पशु पक्षी भी करते हैं; सो मनुष्य भी यदि इतना ही करे तो कोई विशेषता नहीं। परन्तु स्वार्थ पर दृष्टि न रखते हुए, सार्वजनिक हित के कार्य करना, एक बड़ा भारी गुण है। इसके लिए पहले मनुष्य के हृदय में परोपकार बुद्धि का विकास होना चाहिए; और वैसे कार्य करने की शक्ति आनी चाहिए। ऐसी दशा एब्राहम लिंकन को, चाहे बिलकुल पूर्णतया न हो, किन्तु अधिकांश में अब प्राप्त हो गई थी। वह केवल अपने उद्योग के ही बल पर इतना चतुर और कर्मशील हुआ था। अपने उद्योग और प्रयत्न पर उसे पूर्ण विश्वास था। अर्थात् वह यह अच्छी तरह समझ गया था कि अपनी शक्ति पर ध्यान रख कर उद्योग करने से मनुष्य के उद्देश अवश्य सिद्ध होते हैं। वह बड़ा धर्मात्मा था, इस कारण परोपकार-विषयक विलक्षण उत्सुकता उसके हृदय में सदैव जाग्रत रहती थी। इसके सिवाय "मन में और वचन में और"—यह बात उसमें बिलकुल नहीं थी। जो कुछ कहता वही करता और जो कुछ करता वही बतलाता। यही उसका स्वभाव था। वह कोरा वेदान्ती नहीं था। वेदान्त को कार्यरूपमें परिणत करके दिखलाने वाला पुरुष था। उसका नियम था कि

साधु स्वभाव कर्मयोगी लिंकन।

जो बात उसके परिश्रम से होने योग्य होती उसे वह तत्काल कर डालता, व्यर्थ की बड़बड़ उसे पसन्द नहीं थी। वह सच्चा धर्मशील पुरुष था। उसका धार्मिक आचरण भीतर बाहर एक सा था। उसे पूर्ण विश्वास था कि ईश्वर जो कुछ करता है, अच्छा ही करता है, उसमें बुरा कुछ भी नहीं होता—मनुष्य की दृष्टि से उसमें जो बुराई देख पड़ती है वह सिर्फ उसके अज्ञान के कारण। वह अपने इसी विश्वास के अनुसार, परमात्मा पर पूर्ण भरोसा रख कर अपने सब काम करता रहता। सारांश यही कि भगवान् कृष्ण की गीता का वह कर्मयोगी था। उसका उत्तम स्वभाव सब लोगों को अच्छी तरह मालूम हो गया था। उसका चाल चलन छोटे बालक के समान सरल, निष्कपट और लोगों के मन में प्रेम उत्पन्न करने वाला था। वह प्रामाणिक कैसा था, इसके उदाहरण ऊपर आ ही चुके हैं। परन्तु यह नहीं था कि प्रामाणिकता को अच्छा समझ कर उसने उसका अभ्यास किया हो—कृत्रिम प्रामाणिकता उसमें नहीं थी; किन्तु यह गुण उसका स्वाभाविक था। अर्थात् इसे छोड़ कर वह चल ही नहीं सकता था। असत्य तो उसकी जिह्वा में कभी छू भी नहीं गया था। हालेंड नामक एक उत्तम ग्रन्थकार ने उसके स्वभाव का वर्णन करते हुए लिखा है:—"उसे सब मनुष्य अपने से जान पड़ते थे; वह सब पर ममता रखता था; उसमें कोई दुर्गुण नहीं था; वह प्रामाणिक, सत्यवादी, सरल, परोपकारी, धार्मिक, बुद्धिमान्, उद्योगी और अपने प्रयत्न के बल पर कार्य सिद्ध करने का साहस रखने वाला था—अर्थात् संसार के व्यवहार में जिन गुणों की आवश्यकता होती है उन सब गुणों से वह सम्पन्न था।"

परोपकार में प्रवृत्ति

एब्राहम लिंकन में यह एक विशेष गुण था कि उससे जितना हो सकता था, परहित करने में कभी नहीं चूकता था। श्रीसमर्थ रामदास स्वामी ने अपने "दास-बोध" में एक जगह यह उपदेश दिया है कि "जितना कुछ अपने को मालूम हो वह सब धीरे धीरे अन्य लोगों को सिखा देना चाहिए और सब लोगों को चतुर-दक्ष बना देना चाहिए।" यह उपदेश, जान पड़ता है एब्राहम लिंकन के हृदय में मूर्तिमान वास करता था। उसका यह नियम था कि दुकान अथवा पोस्टआफिस का काम समाप्त होने पर, बाहर की ओर बैठ कर, सर्वसाधारण अज्ञान लोगों को अच्छी अच्छी पुस्तकें और समाचारपत्र पढ़ कर सुनाया करता और उनमें जो बातें लिखी रहती थीं उनके विषय में वह जहाँ तक जानकारी रखता था, बड़ी शान्ति के साथ लोगों को बतलाया करता था। इसी प्रकार किसी के पत्र लिख देता, किसी के पत्र पढ़ देता, इत्यादि सब दूसरों के काम वह बड़े उत्साह से किया करता था। यही नहीं, बल्कि दीन-हीन लोगों को सहायता करने में वह अपनी योग्यता, सामर्थ्य और स्वार्थ की ओर भी ध्यान न देते हुए परिश्रम करता रहता था। एक दिन सुबह खूब कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था, और आबट्रेंट नामक एक बहुत गरीब मनुष्य, बिना कपड़ों के, थर थर कांपते हुए, हाथ में कुल्हाड़ी लिये जंगल काट रहा था, एब्राहम लिंकन से उसका कष्ट न देखा गया। उसका हृदय एकदम दयार्द्र हो गया और उससे उसने पूछा "भैया, इस काम के बदले में तुम्हें क्या मजदूरी मिलेगी? आबट्रेंट ने कहा, "इसमें मुझे एक डालर मिलेगा और उससे मैं पहले अपने पैर के लिए जोड़ा मोल लूँगा; क्योंकि आज-

कल सर्दी में काँटों और कंकड़ों से पैरों में बड़ा कष्ट होता है, और फिर देखा जायगा।" यह सुन कर एब्राहम लिंकन ने उसके हाथ से कुल्हाड़ी लेकर उससे कहा, "जाओ तुम बहुत सर्दी खा गये हो, उस आग के पास बैठो, तब तुम्हें कुछ आराम मिलेगा।" इतना कहकर उसने स्वयं वह सब जंगल, जो उस मनुष्य को काटना था, बात की बात में काट डाला। यह देख कर ट्रेंट और उस जंगल के स्वामी को बड़ा आश्चर्य हुआ। इस प्रकार की उसकी अनेक आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं। इनसे चारों ओर उसकी प्रशंसा होने लगी, और सब ने यह समझ लिया कि एब्राहम लिंकन, वास्तव में कोई बड़ा आदमी है, सच है, सज्जनों का यही हाल होता है कि वे दूसरों के कष्ट को नहीं देख सकते और उसे दूर करने के लिए अपनी जान तक खपाने को तैयार रहते हैं।

व्यवस्थापक सभा में प्रवेश।

कुछ दिनों बाद उस प्रान्त की व्यवस्थापक सभा के सभासदों के चुनाव का अवसर आया। उस समय साघ-गामन प्रान्त की ओर से जो नौ सभासद बहुमत से चुने गये उनमें एब्राहम लिंकन भी था। उन नौ लोगों के विषय में कहा जाता है कि ये सब बहुत ही ऊँचे, और उनमें भी एब्राहम लिंकन सब से अधिक ऊँचा था। इस व्यवस्थापक सभा में वह बड़ी निःस्पृहता, स्वार्थत्याग और देशोपकार से प्रेरित हो कर बोलता था। उसका भाषण अन्य लोगों के मन पर बहुत अच्छा प्रभाव डालता था। उसके बोलने के विषयों में, गुलामों का छुटकारा, मुख्य विषय होता था। इससे उसके बहुत से विरोधी हो गये थे, परन्तु उसने कभी परवा नहीं की और अपने वचन से नहीं टला।

इस व्यवस्थापक सभा में जगह मिलने के पहले ही एब्राहम लिंकन को कानून के अध्ययन करने की इच्छा हुई थी और ब्लेकहाक की लड़ाई के समय, स्प्रिंगफील्ड निवासी मेजर स्टुअर्ट नामक वकील से उसका परिचय भी हो गया था। लिंकन को उसने कानून की पुस्तकें देना भी स्वीकार किया था। कहते हैं कि वे पुस्तकें लाने और उन्हें लौटाने के लिए वह कभी कभी बारह बारह, तेरह तेरह कोस, सिर पर पुस्तकों का बोझा रख कर, जाता-आता रहता था। इसमें उसे आलस्य भी कभी न आता था। वह सदैव अपने अध्ययन में लगा रहता था। यहाँ तक कि जिस समय वह पढ़ने में लगता उसे इस बात का भी ज्ञान नहीं रहता था कि कौन उस के पास आया और कौन गया। कभी कभी तो ऐसा देखने में आता कि कोई पुस्तक लेकर जो एक बार वह किसी वृक्ष के नीचे बैठता तो फिर वह दो दो, तीन तीन पहर वहाँ से उठना ही न जानता। इसी से उस समय कुछ लोग उसके लिए कहा करते कि क्या इस पर पागलपन तो नहीं सवार हुआ है! परन्तु एब्राहम लिंकन की इस दशा पर आश्चर्य करने की कोई बात नहीं। सच तो यह है कि दृढ़ संकल्प वाले पुरुष का हाल ही ऐसा होता है। श्रीरामकृष्ण परमहंस, इत्यादि महात्मा भी जब एकाग्र चित्त से परमात्मा का चिन्तन करते तब लोग उन्हें पागल बतलाया करते थे। न्यूटन, बेकन, इत्यादि तत्वज्ञानी पुरुष जब किसी बात का अनुभव प्राप्त करने के लिए कोई विचित्र प्रयत्न करते तब उन्हें भी लोग पागल ठहराया करते थे। परन्तु इन उदाहरणों से एक बात विशेष ध्यान में आ सकती है; और वह यही है कि जिस विषय को हमें

कानून का अध्ययन।

अच्छी तरह सिद्ध करना है, जब तक अच्छी तरह उसके पीछे न लग जायँ तब तक वह सिद्ध नहीं होता। एब्राहम लिंकन कानून के पीछे पड़ गया, उसी की धुन उस पर सवार हुई, और सन् १८३७ में उसने विकालत की परीक्षा पास कर ली। व्यवस्थापक सभा में वह उस समय भी चुना गया था।

वकील लिंकन

विकालत की परीक्षा पास होने पर लिंकन, काम के विषय में, मेजर स्टुअर्ट का हिस्सेदार बन गया और न्यूसेलम गावँ को छोड़ कर स्प्रिंगफील्ड में जा रहा। उस समय न्यूसेलम के निवासियों को अत्यन्त दुःख हुआ। उन्होंने समझा कि मन का इतना उदार, इतना पवित्र और इतना परोपकारी पुरुष अब हमें नहीं मिलने का। और यह ठीक था। उस गाँव में कई वर्ष तक यह हाल था कि किसी का कोई बड़ा काम अटका होता, किसी को किसी विषय पर कोई सलाह, इत्यादि लेनी होती, अथवा किसी को कुछ भी सहायता की आवश्यकता होती वह बिना रोक एब्राहम लिंकन के पास जाता और अपना काम निकाल आता। ऐसे मनुष्य के वियोग से यदि वहां के लोगों को दुःख हुआ तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं।

सच्चाई और परोपकार के साथ विकालत।

बहुत लोगों की समझ है कि विकालत का काम, सत्य की रक्षा रखते हुए, कोई नहीं कर सकता, और यह कई अंशों में ठीक भी है, बहुत से वकील भी अपना यही अनुभव बतलाते हैं। परन्तु प्रत्येक नियम के लिए जैसे कुछ न कुछ अपवाद रहते ही हैं वैसे ही सारी वकील-मंडली में एब्राहम लिंकन को भी एक अपवाद ही कहना चाहिए। अर्थात् उसके चरित्र से यह स्पष्ट दिखाई देता है कि विकालत का

काम करते हुए, असत्य से उसने अपना मन कभी अपवित्र नहीं होने दिया; सिर्फ यही नहीं; किन्तु पाप में प्रवृत्त न होते हुए, केवल हिस्सेदार की हैसियत से, असत्य से उत्पन्न जो द्रव्य का अंश उसे बिलकुल सहज में मिल सकता था उसे भी उसने कभी स्पर्श नहीं किया। इस विषय में अनेक विचित्र बातें उसके चरित्रग्रन्थों में लिखी हैं। उनमें से कुछ यहाँ उदाहरण के लिए, देते हैं।

एक बार एक मनुष्य उसके पास आया और बोला "मेरा एक मुकद्दमा है, उसमें मैं आपको वकील करना चाहता हूँ।" एब्राहम लिंकन उसके मुकद्दमे का सारा हाल शान्तिपूर्वक सुन कर बड़ी गम्भीरता से बोला, "हाँ, मैं अगर प्रयत्न करूंगा तो फैसिला अवश्य आपके अनुकूल ही कराऊँगा; पड़ोसियों में कलह मचाऊँगा; और छै सौ डालर उस बिचारी गरीब विधवा से छिनवा कर आपको दिलवाऊँगा; उस समय वह स्त्री और उसके छै बच्चे बिचारे पेट के लिये मारे मारे फिरेंगे; यह सब होगा। पर इधर देखिये, मैं समझता हूँ कि आपके इस दावे की रकम पर जैसा आपका हक है वैसा ही उस स्त्री और उसके छै बच्चों का भी हक है। आप जानते हैं, कई बातें ऐसी होती हैं जो कानून से उचित होती हैं, पर नीति की दृष्टि से बिलकुल अनुचित और पापमूलक देख पड़ती हैं। मैं आपका वकील तो हो नहीं सकता; हाँ, इतना अवश्य हाथ जोड़ कर निवेदन करूंगा कि ये छै सौ डालर उस बिचारी अनाथ स्त्री से छीन लेने का प्रयत्न आप छोड़ दीजिये और किसी दूसरे उद्योगधंधे में उन्हें पैदा करने की कोशिश कीजिए।" पाठकवृन्द! ऐसी सलाह देने वाले

कितने वकील निकलेंगे ? उस मनुष्य के अनुकूल फैसला हुआ होता अथवा प्रतिकूल—परन्तु मुकदमे की रकम का मेहनताना और फसलाना तो अवश्य ही लिंकन की जेब में आया होता ।

एक खून के मुकदमे में एब्राहम लिंकन और उसका हिस्सेदार वकील, दोनों अभियुक्त की तरफ से थे । मुकदमा करीब करीब आधे तक आया था कि उसके प्रमाणों से लिंकन को विश्वास हो गया कि अभियुक्त से अपराध अवश्य हुआ है । बस तुरन्त ही उसने उस मुकदमे से अपना हाथ खींच लिया । परन्तु दूसरा वकील बड़ा उस्ताद था । उसने इधर उधर का तर्क भिड़ा कर, न्यायाधीश की आँखों में धूल झोंक कर, वह मुकदमा जीत लिया और अभियुक्त को निर्दोष सिद्ध कर के मुक्त करा दिया । उसने बड़ी खुशी से वकील को नौ सौ डालर दिये । उनमें से आधे डालर, वह वकील, हिस्सेदार की हैसियत से, एब्राहम लिंकन को देने लगा; परन्तु उसने उसमें से एक पैसा भी नहीं छुआ ।

काम करते समय उसका हिस्सेदार वकील जब उसके साथ न होता तब लिंकन उसके हिस्से के रुपये अलग एक कागज की पुड़िया में बाँध कर रख देता था; और उस पर उसका नाम लिख देता था । इस पर एक बार उससे किसी ने पूछा कि आप ऐसा क्यों करते हैं तब लिंकन ने कहा कि "यदि मैं ऐसा न करूँ तो कदाचित् भूल से इस द्रव्य का उपयोग मुझ से हो जायगा; और ऐसा करना मैं ठीक नहीं समझता । मैं अपनी माता को यह वचन दे चुका हूँ कि दूसरे का पैसा मैं कभी काम में न लाऊँगा ।"

एक दीवानी मुकदमे में एब्राहम लिंकन वादी की तरफ से वकील था। परन्तु जिस रकम का दावा उसने किया था उसमें से बहुत से द्रव्य लौट मिलने की रसीद उसे प्रतिपक्षी के वकील ने दिखलाई। तब तो लिंकन को बड़ा खेद हुआ और वहाँ कोर्ट से चला गया, जब जज ने उसे बुला भेजा तब उसने कहला भेजा कि अब मुझे आने में बड़ा संकोच मालूम होता है। काले मुँह से लोगों के बीच में अब मैं कैसे आऊँ ? मुझ से आया नहीं जाता। क्षमा कीजिए।"

एक खूनी मुकदमे से एब्राहम लिंकन का नाम स्प्रिङ्ग-फील्ड में बहुत ही प्रसिद्ध हो गया। वह मामला इस प्रकार था:— आर्मस्ट्राङ्ग नामक एक नवयुवक पर खून करने का अभियोग लगाया गया था; और उसका मुकदमा हो रहा था। यह आर्मस्ट्राङ्ग जिस महाशय का लड़का था उसी के यहाँ, कई वर्ष पहले, एब्राहम लिंकन नौकर रह चुका था। और उस समय उस लड़के को एब्राहम लिंकन ने बहुत खिलाया था। यहाँ तक कि पालने में झुलाता रहता था। अभियुक्त का पिता पहले ही मर चुका था। हाँ, माता जीवित थी। इन सब बातों को ध्यान में लाकर एब्राहम लिंकन ने उस स्त्री को पत्र लिखा कि मेरी गरीबी की दशा में आपने मुझ पर अनन्त उपकार किये हैं उनसे किसी न किसी अंश में उऋण होने के लिए मैं वचन देता हूँ कि इस मुकदमे में मैं, बिना कुछ लिए ही, आपके लड़के का वकील होऊँगा; और उसको न्याय मिलने के लिये यथासाध्य प्रयत्न करूँगा। आप चिन्ता न करें।

मुकदमा चलने पर मुख्य गवाही ने विश्वासपूर्वक कहा कि करीब साढे नौ बजे के मैंने खुद अपनी आँखों देखा कि

आर्मस्ट्राङ्ग ने उस मनुष्य पर जो प्रहार किया उसके योग से ही उसके प्राण गये। उसने अपने कथन पर विशेष बल देने के लिए यह भी कहा कि उस समय चन्द्र उग आया था और चाँदनी खूब छाई हुई थी, इस कारण वह सारी घटना मुझे अच्छी तरह दिखाई दी। इस साक्षी से न्यायाधीश को अपराध के विषय में एक प्रकार से विश्वास सा हो गया और सब ने यही समझा कि अब आर्मस्ट्रांग किसी तरह बच नहीं सकता। उसके मित्र बिलकुल घबड़ा गये और उसकी माता का कलेजा एकदम काँप उठा। ऐसी दशा में, बड़े धैर्य के साथ एब्राहम लिंकन ने एक बार वह सारा मामला फिर ध्यानपूर्वक जाँच कर देखा। तब उसे विश्वास हो गया कि दुष्ट लोगों के षड्यन्त्र से इस मामले को ऐसा स्वरूप प्राप्त हो गया है। और बिचारा आर्मस्ट्रांग बिना कारण जान से हाथ धो बैठेगा। परन्तु उसके छुटकारे का कोई मार्ग लिंकन को नहीं दिखाई देता था। अन्त में एक दम पंचांग देखने की याद उसे आ गई। और उससे एक बात उसे ऐसी सूझ पड़ी कि जिसके कारण वह सारी गवाही निरुपयोगी हो गई। वह बात यह थी कि उस दिन चन्द्रोदय ग्यारह बजे के पहले हुआ ही नहीं था। यह बात जब एब्राहम लिंकन ने न्यायाधीश के सामने उपस्थित की तब तो सबूत देने वालों के मुँह फक्क हो गये! और न्यायाधीश का मत बदल कर आर्मस्ट्रांग की निर्दोषिता के विषय में उसका पूरा पूरा विश्वास हो गया; तथा उसने उसी दम उसे छोड़ दिया। उस समय उसकी माता को जो आनन्द हुआ वह शब्दों द्वारा प्रकट नहीं किया जा सकता।

उस समय स्वतन्त्र रियासतों में न्यायाधीश न्याय निपटाते हुए गावों गावँ फिरा करते थे; और उनके साथ अपने काम के लिये, वकील लोगों को भी फिरना पड़ता था। इस कारण गाड़ी, घोड़ा, इत्यादि रखना बहुत आवश्यक होता था। परन्तु एब्राहम लिंकन ने कितने ही दिनों तक गाड़ी, घोडा इत्यादि कुछ नहीं रखा; क्योंकि उसकी आमदनी अन्य वकीलों की तरह बहुत अधिक नहीं थी, और इसीलिये वह अपना बोरिया बँधना अपनी पीठ पर बाँधे हुए न्यायाधीश की सवारी के साथ घूमा करता था; और इसके लिये उसे लज्जा इत्यादि कुछ नहीं मालूम होती थी, हमारे यहाँ के नवशिक्षित वकील, जो कर्ज काढ़ कर भी अपना ठाट बाट जमाने की धुन में लगे रहते हैं उनको एब्राहम लिंकन से कुछ नसीहत अवश्य लेना चाहिए।

एब्राहम लिंकन की विकालत में एक बछेड़े का मुकदमा बहुत प्रसिद्ध है। इसका वृत्तान्त इस प्रकार है:— एक बछेड़ा था; सो वादी कहता कि यह मेरी घोड़ी का है और प्रतिवादी कहता कि नहीं मेरी घोड़ी का है। वादी की ओर ३४ गवाही थे। वे अच्छे प्रामाणिक थे; और वे कहते थे कि यह बछेड़ा वादी की घोड़ी का है, यह हम जन्म से देखते आते हैं। और प्रतिवादी की तरफ़ गवाही तीस थे; वे भी अच्छे थे, और वे कहते थे कि यह बछेड़ा प्रतिवादी की घोड़ी का है, यह हम उसके जन्म से देखते आते हैं। उनमें अविश्वसनीय गवाही एक भी नहीं था; और वे सब अपनी अपनी समझ के अनुसार ठीक भी कहते थे; ऐसी दशा में न्यायाधीश बड़ी गड़बड़ी में पड़ा कि अब किया क्या जावे। अन्त में दोनों घोड़ियाँ एक जगह लाकर वह बछेड़ा

भी वहीं लाया गया। इस पर वह बछेड़ा आप ही आप अपनी मा के पास जा कर खड़ा हो गया और घोड़ी उस अपने बच्चे को चाटने लगी, इससे वह भ्रम आप ही आप दूर हो गया। वास्तव में वह बछेड़ा प्रतिवादी का था, सो उसे मिल गया, एब्राहम लिंकन प्रतिवादी का ही वकील था; परन्तु जूरी (पञ्च) के तौर पर जो लोग नियत किये गये थे वे सब निरक्षर-भट्टाचार्य ग्रामीण थे। उनकी समझ थी कि गवाही जिस ओर अधिक हैं उसी ओर का सबूत ज़ोरदार है; और वही पक्ष सच्चा है। इसके सिवाय, इस प्रख्यात प्रकरण में, घोड़ी और बछेड़ा भी यदि ले लिया जाय, तो प्रतिवादी के गवाह बत्तीस होते थे; और उधर वादी के चौंतीस थे ही—अर्थात् प्रतिवादी, जिसका वास्तव में बछेड़ा था और जिसका वकील लिंकन था, उसकी ओर दो गवाह तब भी कम रहते हैं। ऐसी दशा में, जूरी का भ्रम दूर करने के लिए, लिंकन ने कहा, "आप लोग केवल संख्या की ओर न देखिये। आप सिर्फ़ इतना ही देखिये कि एक पैसे भी यदि शर्त लगानी हो तो आप, उस शर्त से, बछेड़ा वादी का कहेंगे या प्रतिवादी का—बस इतना ही आप देखिये; और फिर जिसकी ओर से आपको शर्त लगाना हो उसी पक्ष को प्रबल मान करके, जो कुछ उत्तर आपको देना हो सो दीजिए।" लिंकन के इस प्रकार कहने से पञ्च लोग मामला समझ गये और अपनी सम्मति दे दी। इससे सिर्फ़ इतना ही देखना चाहिए कि लिंकन अपनी बात को किस युक्ति से लोगों के मन पर बैठाल सकता था।

मनुष्य कोई भी काम करता हो, उसमें उसका असली स्वभाव प्रकट हुए बिना कदापि नहीं रह सकता। लिंकन

यद्यपि विकालत का काम करता था, तथापि उसमें जो भूत दया का भाव था सो सदैव व्यक्त हुआ करता था। इसके अनेक उदाहरण पुस्तकों में लिखे हैं। उनमें एक अत्यन्त विचित्र है, उसे यहाँ पर दिये बिना हम से नहीं रहा जाता। एक बार की बात है कि एब्राहम लिंकन अपने दो एक वकील साथियों के साथ कहीं जा रहा था कि इतने ही में उन सब लोगों ने मार्ग में क्या देखा कि एक सुअर एक जगह कीचड़ में फँसा हुआ है; और बार बार प्रयत्न करने पर भी निकल नहीं सकता; और उसके मरने पर नौबत आ रही है। उसकी यह दशा देख कर उन सब मित्रों में कुछ वार्तालाप भी हुआ; परन्तु किसी ने उसकी कुछ भी परवा न की। और सब लोग आगे बढ़ते हुए चले गये। इस प्रकार यद्यपि उस सुअर की उस दीनावस्था पर किसी को कुछ भी दया न आई; परन्तु एब्राहम लिंकन के हृदय की, उस सुअर, की दुर्दशा देख कर, कुछ विचित्र हालत हो रही थी; वह रास्ता चलते ही चलते मन में सोचता जाता था कि उस सुअर की, ऐसे संकट के समय कुछ भी सहायता न करते हुए, हम जो आगे चले आये सो कुछ अच्छा नहीं किया। इस बात को सोच सोच कर उसके दिल की बेचैनी बढ़ती ही गई; और अन्त में जब उससे रहा ही न गया तब वह अपने साथियों को वैसा ही वहाँ छोड़ कर आप पीछे को लौट पड़ा, तथा जिस जगह सुअर कीचड़ में फँसा हुआ तड़फड़ा रहा था वहीं आया; और इस बात की कुछ भी परवा न करते हुए, कि कपड़े कीचड़ में खराब होंगे, वह वैसा ही चहबच्चे में पैठ पड़ा; और उस सुअर को कीचड़ से निकाल कर बाहर छोड़ दिया; तब कहींउसके मन को शांति मिली।

भूत दया

यह बात जब अन्य लोगों को ज्ञात हुई तब इनको बड़ा आश्चर्य हुआ। पर एब्राहम लिंकन को स्वयं इस विषय में कुछ भी विलक्षणता नहीं जान पड़ी। एक बार इसी बात पर कोई बातचीत कर रहा था, जिसे सुन कर लिंकन बोल उठा, "भाई, मैंने इसमें कोई विशेष बात नहीं की। न मैंने उस सुअर पर कोई उपकार किया। बात यह है कि उस सुअर को संकट से छुड़ा न सकने के कारण मेरे मन में जो बेचैनी हो रही थी उसी के दूर करने के लिए मैं फिर पीछे लौट गया, और उसको कीचड़ से निकाला। इसका तात्पर्य यही है कि मैंने यह जो कुछ किया सो उस सुअर को सुख देने के लिए नहीं; किन्तु अपने मन की अशान्ति को दूर करने के लिए किया। अन्यथा मेरे मन को चैन नहीं पड़ती।" वास्तव में उसके ये विचार बड़े विचित्र हैं, और सचमुच साधुओं को ही शोभा देने योग्य हैं। साधारण लोगों का तो यह हाल है कि जहाँ कुछ खाने पीने को हुआ कि फिर वे अपने भाई बन्दों को भी भूल जाते हैं; और सीधे बात भी नहीं करते।

मातृ-भक्ति

एक कवि ने कहा है कि जैसे फलभार से वृक्ष नम्र होते हैं, बादल, पानी से भरे हुए, नम्र होते हैं उसी प्रकार सज्जन पुरुष विद्या और धन इत्यादि से सम्पन्न होकर नम्र होते हैं। अहा! यह कथन एब्राहम लिंकन के विषय में कैसा पूरा पूरा चरितार्थ होता है! ज्यों ज्यों उसकी योग्यता बढ़ती गई त्यों त्यों उसकी वृत्ति नम्रता और परोपकार की ओर बढ़ती गई। लिंकन अपने नातेदारों और इष्टमित्रों की यथा शक्ति सदैव सहायता करता रहता था; और सब की बड़ी प्रतिष्ठा करता था। माता उसकी सौतेली थी; पर उस पर उसका बड़ा प्रेम था। एक बार एक मुकदमे

में उसे पाँच सौ डालर पारितोषिक मिला। इस पर वह अपने मित्रों से कहने लगा कि ढाई सौ डालर यदि और मिल जायँगे तो इसी में मिला कर साढ़े सात सौ डालर की १६० एकड़ जमीन खरीद कर उसे मैं अपनी माता के नाम लिखवा दूँगा। इससे उसे आगे किसी बात की अड़चन नहीं पड़ेगी। इस पर उसके एक मित्र ने कहा कि, "यह जमीन बिलकुल उसके नाम ही लिखा देने की क्या जरूरत है? मेरी समझ में तो इतना ही इन्तिजाम कर देना काफी होगा कि उस जमीन की केवल आमदनी उसकी जिन्दगी भर उसे मिलती रहे।" यह सुनकर लिंकन ने उत्तर दिया, "ऐसा मैं क्यों करूँ? वास्तव में माता ने मेरे ऊपर इतने उपकार किये हैं कि उनके देखते हुए मेरा इतना करना कुछ भी नहीं है। उसके उपकारों का बदला मैं देही नहीं सकता। सच तो यह है कि मैं उसे जितनी भी सहायता करूँ सब थोड़ी ही है।" सौतेली माता पर लिंकन का इतना प्रेम था! इस घटना से हमको भरत और राम की याद आती है। आज तक जितने भी महापुरुष धरती पर हो गये हैं वे सभी मातृ भक्त थे; और इतिहास के अनेक उदाहरणों से यह बात भली भाँति सिद्ध होती है कि जो लोग मातृभक्त होते हैं उनका सदैव कल्याण ही होता है। "न मातुः पर दैवतम्" माता से श्रेष्ठ और कोई देवता नहीं। यह धर्मसूत्र सदैव हमें ध्यान में रखना चाहिए।

उन्हीं दिनों, अर्थात् सन् १८४२ के लगभग, एब्राहम लिंकन ने मेरी टाड नामक एक स्त्री से विवाह किया। ये स्त्री-पुरुष परस्पर एक दूसरे पर बहुत प्रेम करते थे और सदैव आनन्दपूर्वक रहते थे।

एब्राहम लिंकन सब प्रकार से सब का उपकार करता रहता था और सार्वजनिक कार्यों में उसकी बड़ी भक्ति थी। इस कारण लोगों में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। सब ने यही समझा कि ज्यों ज्यों इसे बड़ी पदवी मिलती जायगी त्यों त्यों इसके हाथ से देशहित के भी बड़े बड़े कार्य होते जायंगे। इसके सिवाय लिंकन बुरा कभी किसी का नहीं चेतता था; इस कारण उसके विषय में भी किसी के मन में कोई बुराई कभी नहीं आती थी। और चूंकि, जहाँ तक उससे हो सकता, दूसरे की भलाई करने में वह कभी नहीं चूकता था, इस कारण लोग भी सदा सर्वदा उसकी भलाई ही चाहते थे। इस महापुरुष के द्वारा आगे बहुत बड़े बड़े कार्य हुए; उनका वर्णन अब अगले अध्याय में किया जायगा।

सातवाँ अध्याय।

राज्याधिकार-सभाप्रवेश।

जनता चाहे सुशिक्षित हो, चाहे अशिक्षित हो, परख उसको होती है। किससे अपनी बुराई होगी और किससे अपनी भलाई होगी—यह बात वह अच्छी तरह जानती है।

कांग्रेस में लिंकन

हित-अनहित पसु पच्छिहु जाना।
मानुष-तनु गुन-ज्ञान-निधाना॥

मतलब यह है कि अपने हित-अनहित को जान कर जनता अपनी भलाई की व्यक्ति को आप ही आप अवश्य चुन लेती है। उसे कुछ बतलाना नहीं पड़ता। अच्छे वकील के पास मुवक्किल आप ही आप चलते आते हैं; शर्करा चींटियों को आमन्त्रण नहीं भेजती; गुलाब के पुष्प के पास भ्रमर आप ही आप दौड़ते आते हैं। सब अपना अपना हित देख कर काम निकालते हैं। सानगामन प्रान्त की ओर से एब्राहम लिंकन ने जब आठ वर्ष कायदेकौंसिलर का कार्य किया तब सब लोगों ने समझ लिया कि अब वाशिंगटन की बड़ी व्यवस्थापक सभा में यदि लिंकन चुना जाय तो बड़ा काम हो। स्वतन्त्र रियासतों के राज्यकार्य चलाने के कायदे यही सभा बनाती है; इसी को कांग्रेस कहते हैं। इसमें दो भाग रहते हैं। एक भाग को सेनेट कहते हैं; और दूसरे भाग को हाउस

आफ रेप्रेज़ेंटेटिव—अर्थात् प्रतिनिधि सभा कहते हैं। सेनेट में, प्रत्येक रियासत की व्यवस्थापक सभा द्वारा चुन कर भेजे हुए दो दो महाशय रहते हैं। उनकी अवधि दो वर्ष की होती है और हाउस आफ रेप्रेज़ेंटेटिव में रियासत के अनेक लोक-नियुक्त सभासद रहते हैं। रियासत की जनसंख्या के अनुसार वे न्यूनाधिक रहते हैं। २१ वर्ष से अधिक अवस्था वाले सब लोगों को उनके चुनाव के लिए मत देने का अधिकार रहता है। ऐसा नियम है कि सेनेट-सभासदों की अवस्था तीस के ऊपर होनी चाहिए और हाउस आफ रेप्रेज़ेंटेटिव के सभासदों की उमर पचीस के ऊपर होनी चाहिए। इन दोनों भागों के सभासदों को प्रति वर्ष पाँच हज़ार डालर और आने जाने का व्यय भी दिया जाता है। अर्थात् यह सभा ग्रेटब्रिटेन की पार्लिमेण्ट की तरह है।

यों तो इलिनाइस प्रान्त के सभी कौंसिलर कांग्रेस में जाने के अभिलाषी थे; परन्तु उनमें क्ले नामक महाशय को इस विषय में बड़ी आशा थी; क्योंकि अपनी बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता के लिए वह बहुत दिनों से प्रसिद्ध था। इसके सिवाय वह गुलामों के व्यापार के भी बिलकुल विरुद्ध था; इसी लिए एब्राहम लिंकन को बड़ी आशा थी कि इसके कांग्रेस में जाने से इस घृणित प्रथा का कुछ न कुछ प्रतिरोध अवश्य होगा। अतएव नाना प्रकार के विषयों पर भाषण करके और क्ले की प्रशंसा करके एब्राहम लिंकन उसके विषय में लोगों के मन आकर्षित करने का प्रयत्न करता था। सन् १८४४ से यह प्रयत्न हो रहा था, परन्तु कुछ परिणाम नहीं हुआ। मतलब यह कि कांग्रेस में क्ले की योजना नहीं हो सकी। परन्तु इससे एक बात यह अवश्य हुई कि एब्राहम

लिंकन के विषय में लोगों की पूज्यबुद्धि और भी अधिक बढ़ गई; और आखिर सन् १८४६ में वह हाउस आफ रिप्रेज़ेंटेटिव में आ गया। विचित्रता यह हुई कि एब्राहम लिंकन कई वर्ष से जो करने के लिए उद्योग कर रहा था वह स्वयं उसीके लिए फलीभूत हो गया। इससे दो बातें सिद्ध होती हैं। एक यह कि कोई कर्म निरर्थक नहीं जाता – उसका फल मिलता ही है; आज मिले या दस दिन बाद। दूसरी यह कि परोपकार का बीज बोने से मनुष्य को उसका विलक्षण फल मिलता है।

कांग्रेस में प्रविष्ट होने पर एब्राहम लिंकन को एक बड़ा जबरदस्त प्रतिपक्षी मिला। उसका नाम था डग्लस। अच्छा पढ़ा लिखा था। वक्ता भी बहुत अच्छा था। परन्तु उसके मत, विशेष कर गुलामों के व्यापार और गुलाम रखने के विषय में, एब्राहम लिंकन के बिलकुल विरुद्ध थे। लिंकन का कथन था कि गुलामों का क्रय विक्रय करना और उनका रखना बड़ा भारी पाप है; और मनुष्य के लिए यह जैसा दुःखदायक है वैसा ही ईश्वर को भी अप्रिय है, इसलिए यह पृथा एकदम बन्द होनी चाहिए। परन्तु, उस समय कई रियासतों में—विशेषतः दक्षिण ओर की रियासतों में—इतने हबशी गुलाम बड़े बड़े किसानों के घरों में थे कि खेती इत्यादि के उनके प्रायः सारे काम, बहुत ही थोड़े खर्च में, उन गुलामों की बदौलत हुआ करते थे। इस कारण जहाँ किसी ने इस दासत्व की चाल के विरुद्ध आवाज उठाई कि नीचे से ऊपर तक उनका शरीर जल उठता था। इस प्रकार के जो बड़े बड़े लोग थे उन सब का अगुआ डग्लस था। इसी गुलामों की पृथा को लेकर कांग्रेस

कांग्रेस में लिंकन के द्वारा गुलामगीरी का निषेध।

में भी दो दल हो गये थे। और अपने अपने पक्ष का कार्य सिद्ध करने के लिए दोनों ही खूब प्रयत्न करते थे, इस कारण उनमें वैर भाव बढ़ रहा था। यह देख कर लिंकन को बहुत दुःख होता था। वह सारे प्रान्त में घूम घूम कर गुलामगीरी को उठा देने के लिए व्याख्यान देता, और उसके पीछे पीछे डगलस भी, दासत्व की प्रथा के लाभ दिखलाते हुए बड़े आवेश के साथ भाषण करता फिरता था। इस प्रकार के झगड़े से बड़ी फूट फैल गई—फूट क्या फैल गई—दो बड़े बड़े दल हो गये; कुछ लोग इधर, तो कुछ लोग उधर; बड़ी गड़बड़ी मच गई। कांग्रेस में खूब तनातनी थी। लिंकन को इस विषय पर रह रह कर खेद होता था। लोगों के मन को ठीक मार्ग पर लाने के लिए वह सदैव भाषण किया करता था। इससे १८५६ में प्रजासत्ताक पक्ष की ओर से एक मंडली स्थापित हुई। उसके सामने लिंकन ने एक बड़ा अच्छा भाषण किया। यह भाषण अमेरिका के इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है। इसका आरम्भ उसने इस प्रकार किया है:-"घर में कलह उत्पन्न होने से सुख कभी नहीं हो सकता। इस राज्य में आधे लोग दासत्व की प्रथा के पक्ष में हैं; और आधे उसके विपक्ष में हैं। यह दशा अब बहुत दिन नहीं रह सकती।" इसके बाद उसने गुलामपक्ष का अत्यन्त निषेध किया। इससे कुछ लोग बहुत चिढ़े और उससे द्वेष करने लगे। यह द्वेष ज्यों ज्यों बढ़ता गया त्यों त्यों गुलामगीरी नष्ट करने के विषय में लिंकन और भी अधिक उत्तेजित होने लगा। उसके हृदय की दृढ़ता बढ़ती ही गई। यह देख कर उसके दल के लोगों की स्फूर्ति भी बहुत बढ़ी—सो यहाँ तक कि एक बार उसके एक उत्तम भाषण से लोग इतने आह्लादित

हुए कि उसे कंधे पर रख कर वे एक प्रसिद्ध भोजनगृह में ले गये; और वहाँ उसके लिए एक बड़ा अच्छा भोज दिया। यह उसकी लोकप्रियता यहाँ तक बढ़ी कि अन्त में लोगों ने समझा कि लिंकन के समान वक्ता और स्वदेश-हितचिन्तक सम्पूर्ण अमेरिका में दूसरा और कोई नहीं है। उसका प्रतिस्पर्धी डग्लस यद्यपि बड़ा विद्वान और वक्ता था, और उसके भी दल के लोग कुछ थोड़े नहीं थे; परन्तु सत्पक्ष एब्राहम लिंकन की ओर होने के कारण उसकी तेजस्विता ही कुछ विलक्षण थी। प्रतिपक्षी लोग उसके आगे चकाचौंध में आ जाते; और उनका प्रभाव बिलकुल फीका पड़ जाता था।

जनता पर लिंकन का प्रभाव।

एब्राहम लिंकन को रियासत की स्वतंत्रता का बड़ा अभिमान था। उसके विषय में बातचीत करते हुए वह बड़े आतंक में आ जाता था। प्रतिपक्षियों से भाषण करते हुए एक बार उसने कहा, "मेरे बतलाये हुए इन पवित्र सिद्धान्तों की रक्षा करके फिर मेरे साथ चाहे जैसा बर्ताव करो। राजसभा में स्थान प्राप्त करने के लिए सिर्फ मेरा पराभव करके ही आप चुप क्यों रहते हैं—मैं तो कहता हूँ, मुझे पकड़ो और जान से मार डालो। इस विषय में मेरा कुछ भी झगड़ा नहीं है। अवश्य ही मैं यह ढोंग नहीं दिखलाता कि सांसारिक सुख और गौरव मुझे नहीं चाहिए। परन्तु, इस झगड़े में मेरी दृष्टि केवल उस अधिकार की ही ओर नहीं है, किन्तु इससे भी अधिक श्रेष्ठ और पवित्र कोई उद्देश्य मेरे हृदय में मौजूद है; और उसी की नीति के अनुसार मैं चलता हूँ। आप से मेरी प्रार्थना इतनी ही है कि, इस झगड़े में सफलता

चाहे जिसको प्राप्त हो, इसकी परवा आप न करें। क्योंकि यह विचार बिलकुल क्षुद्र है। मैं इसे कोई चीज़ नहीं समझता। मैं कोई चीज़ नहीं; और डगलस भी कोई चीज़ नहीं। परन्तु आप ऐसा न कीजिए कि जिससे अमेरिकन रियासतों की स्वतंत्रता के घोषणापत्र में, जो कि भूत दया की अविनाशी ध्वजा है, कुछ धक्का लगे। बस इतनी ही मेरी विनती है।" इस प्रकार के भाषणों से उसने सब लोगों को अपने वश में कर लिया। सब लोग यही समझने लगे कि एब्राहम लिंकन के समान महापुरुष सम्पूर्ण स्वतंत्र रियासतों में नहीं है। इस पर किसी को आश्चर्य न करना चाहिए। क्योंकि आज अनेक युगों से यह बात देखने में आ रही है कि जो अपने स्वार्थ की ओर ध्यान न दे कर, सत्यशीलता से बर्ताव करते हुए, अपनी सम्पूर्ण शक्ति परोपकार में लगा देता है उस मनुष्य की पूजा देवता के समान होती है।

अब तो कांग्रेस के सभासदपन की अवधि समाप्त होने पर लोग बार बार एब्राहम लिंकन को ही चुनने लगे; और वह बराबर मन-कर्म-वचन से अपना कर्तव्य करता रहा। सन् १८६० तक यही हाल रहा। इस समय उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया था। और, गुलामों के विषय में जो आन्दोलन हो रहा था उसके कारण तो लिंकन उत्तर ओर की रियासतों में बहुत ही लोकप्रिय हो गया था। उन्हीं दिनों के लगभग स्वतंत्र रियासतों के पुराने अध्यक्ष की अवधि समाप्त होने पर आई थी; और उसकी जगह पर नवीन अध्यक्ष चुनने के लिए चारों ओर हलचल मची हुई थी। इस पद के लिए डगलस और लिंकन दोनों के पक्षवाले लोग अपने अपने मित्र के लिए असीम प्रयत्न कर

लिंकन राष्ट्रपति चुना गया।

रहे थे। जगह जगह सभाएँ हो रही थीं। खूब व्याख्यान दिये जा रहे थे। इन दोनों के अतिरिक्त पाँच और भी उम्मेदवार थे, जिनके लिए अलग ही कोशिश हो रही थी। पर यह सारी हल चल बहुमत पर अवलम्बित थी। अमेरिका में यह कायदा है कि पहले सारी रियासतें आपस में बहुमत करके अध्यक्ष की जगह के लिए उम्मेदवार खड़े करती हैं, बाद को यह देखा जाता है कि उन सब के विषय में सारी रियासतों के लोगों का कैसा बहुमत पड़ता है; फिर इसके बाद जिसको अधिक मत मिलते हैं वही अध्यक्ष नियत किया जाता है। तदनुसार कार्यवाही हो कर अब फैसला होने का समय आ गया। सब का ध्यान उस फैसले की ही ओर आकर्षित हुआ। १६ जून सन् १८६० के दिन शिकागो में, कोई पच्चीस हजार लोगों की सभा में इस मामले का निपटारा हुआ; और एब्राहम लिंकन सम्पूर्ण रियासतों का अध्यक्ष, अर्थात् राष्ट्रपति, नियुक्त किया गया। यह समाचार सुन कर उत्तर ओर की रियासतों के आनन्द की सीमा न रही। बड़े बड़े शहरों में तोपों की सलामी दगने लगी; और सारे देश में एक प्रकार की विलक्षण जागृति दिखाई देने लगी।

यह सुसमाचार लिंकन को स्प्रिङ्गफील्ड में तार के द्वारा मिला। उसे भी सन्तोष हुआ। परन्तु, कुछ बहुत बड़ा आनन्द उसे नहीं हुआ। क्योंकि उस काम की कठिनाई, उसका महत्व और उसकी जवाबदारी से वह पूर्णतया परिचित था। तथापि, जो कार्य सामने आ पड़ा है उसे यथाशक्ति पूर्ण करने का उसने दृढ़ निश्चय किया। उस समय लोगों में दो दल थे। इनके विषय में लिंकन के मन में बड़ी चिन्ता लग रही थी।

गुलामगीरो के विरुद्ध दृढ़ संकल्प

उसके चुनाव के बाद और पदारूढ़ होने के पहले जो एक घटना हुई उससे उपर्युक्त बात का अच्छी तरह पता चलता है। वह घटना इस प्रकार है :—स्प्रिङ्गफील्ड की सरकारी कचहरी में एक बार बहुत से लोग जमा हुए थे, एब्राहम लिंकन भी उन्हीं में था। वहाँ इस नवीन अध्यक्ष के विषय में बात चीत हो रही थी। उस समय बेटमन नामक एक महाशय ने लिंकन से पूछा कि आपका पक्ष जब कि सत्पक्ष था तब फिर कितने ही लोगों का मत आपके विरुद्ध क्यों हुआ? लिंकन ने उत्तर दिया, "महाशय, देखिये, अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं, इस समय यहाँ तेईस धर्मोपदेशक भिन्न भिन्न पंथों के एकत्रित हैं, और उनमें से बीस मेरे विरुद्ध हैं। इसके लिए क्या किया जाय? इनको मेरा यह मत मालूम है कि राज्य के सम्पूर्ण मनुष्य स्वतंत्र होने चाहिए; और रियासतों के नियमानुसार उनकी स्वतंत्रता की रक्षा होनी चाहिए; और ये यह भी जानते हैं कि मेरे प्रतिस्पर्धी मेरे विरुद्ध मत के हैं। फिर बतलाइये, ऐसी दशा में इनको मेरा विरोध क्यों करना चाहिए? और देखिये, ये लोग पवित्र धर्मशास्त्र हाथ में लेकर संसार को उपदेश करते फिरते हैं! सच पूछिये तो इस शास्त्र के मत से तो इस सम्पूर्ण पृथ्वी पर भी गुलामी को कहीं तिल भर स्थान न मिलना चाहिए। इतने पर भी ये लोग हमारे विरुद्ध मत देते हैं! अब बतलाइये, इसके लिए हम क्या करें?" इतना कह कर एब्राहम लिंकन कुछ ठिठका; और दुःखित हो कर आँखों में आँसू भर कर बोला, "महाशय, मुझे विश्वास है, परमेश्वर है, अवश्य है; और गुलामी तथा अन्याय से उसे पूर्ण घृणा है। मुझ पर चारों ओर से हमले हो रहे हैं, यह मैं खूब जानता हूँ; और

ईश्वर की इसमें क्या इच्छा है सो भी मुझे मालूम है। यदि वह मुझसे कुछ सेवा लेना चाहता होगा तो इसके लिए मैं तैयार हूँ—और मैं समझता हूँ कि वह ऐसा अवश्य चाहता है—और सच पूछिये तो मैं चीज़ ही क्या हूँ ? सब उसी की इच्छा है। मैं अपने पक्ष की सत्यता पर पूर्ण विश्वास रखता हूँ; क्योंकि मैं स्वतंत्रता को ही सत्यस्वरूप समझता हूँ; और भगवान् ईसामसीह ने भी यही कहा है कि स्वातंत्र्य ही सत्य स्वरूप है। मैंने उनसे कभी का कह दिया है कि जिस घर में कलह पैदा हो जाती है—फूट पड़ जाती है—उस घर में शान्ति और सुख नहीं रहता। भगवान् ईसामसीह भी यही करते हैं; और विचारबुद्धि से भी यही सच जान पड़ता है। और अन्त में ऐसा ही अनुभव भी आवेगा। गुलामी रहे, चाहे मिट जाय, डग्लस इसकी कुछ भी परवा नहीं करता। न करे। इसकी चिन्ता ईश्वर को है, भूत दया को है; और मुझको है। और परमात्मा यदि मुझे सहायता करेगा तो अवश्य ही मुझे इस कार्य में सफलता प्राप्त होगी। मुझे अपने उद्योग का परिणाम आज दिखाई नहीं देता। परन्तु वह कभी न कभी दिखाई देगा; दूसरों को भी दिखाई देगा; और तब वे समझेंगे कि मेरा कहना सच था। और तब उन्हें इस बात का पश्चात्ताप होगा कि उन्हें पवित्र शास्त्र का अर्थ ठीक ठीक नहीं समझ पड़ा; और इसी कारण उनके हाथ से ऐसी भूल हुई।"

वाशिंगटन राजधानी को प्रयाण।

इसके बाद, अध्यक्ष के काम पर जाने के पहले, उसने अपनी माता से भेंट की। वह स्प्रिङ्गफील्ड से बहुत दूर अपनी लड़की के यहाँ रहती थी। उसकी आज्ञा ले कर जब लिंकन चलने लगा तब उसकी माता की आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी; और सचमुच उसे ऐसा मालूम हुआ

कि जाने अब यह फिर लौट कर आवेगा या नहीं; क्योंकि इसके शत्रु बहुत हो गये हैं; और वे न जाने किस समय इसका क्या कर डालें। यह बात न केवल उसकी माता के ही मन में आई; किन्तु उसके अन्य इष्ट मित्रों को भी ऐसा ही भय हुआ। और ईश्वरीइच्छा भी क्या ही बलवती होती है कि उनका वह आगे चल कर सत्य भी हुआ। सच कहते हैं कि भावी घटना भी कभी कभी मन में आ कर सच हो जाती है।

११ फरवरी को वह वाशिंगटन जाने के लिए अपने गावँ स्प्रिङ्गफील्ड से चला। उस समय उसको भेजने के लिए स्टेशन पर इतने लोग जमा हुए थे कि उनकी भीड़ के कारण कुछ देर तक वहाँ अन्य लोगों का प्रवेश ही नहीं हो सकता था। सब लोगों ने यही समझा कि आज हमारा एक बड़ा भारी हितकारी हमको छोड़ कर जा रहा है। इनके नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी; और उनकी ओर देख कर एब्राहम लिंकन का हृदय भर आया; आँखों से आँसू बहने लगे; और उसके मुख से शब्द न निकलने लगा। तथापि धैर्य धर कर वह चलते समय उनको ओर देख कर बोला, "प्यारे मित्रो, इस समय आपको छोड़ते हुए मुझे जो दुःख हो रहा है उसे मेरा हृदय ही जानता है। मुझे जो स्थिति आज प्राप्त हुई है वह केवल आप लोगों की कृपा का फल है। मैंने इस जगह आज छब्बीस सत्ताईस वर्ष व्यतीत किये हैं। मेरे बच्चे यहीं पैदा हुए। उनमें से एक चला भी गया। अब आगे आप लोगों से मेरी भेंट कब होगी, सो परमेश्वर ही जानता होगा। आज जितनी जवाबदारी मेरे सिर पर आ पड़ी है उतनी वाशिंगटन के समय से ले कर आज तक प्रायः किसी के सिर पर न आई होगी। वाशिंगटन का सारा भार परमेश्वर पर था; और उसे

जो सफलता प्राप्त हुई सो केवल उसी की सहायता से। ईश्वरी सहायता यदि उसे न होती तो वह सफलता उसे प्राप्त न होती। और भी यह निश्चितरूप से जानता हूँ कि उसकी सहायता के बिना मुझे भी अपने कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। और इसीलिए मेरा सारा भरोसा परमात्मा पर ही है। मैं अपने मित्रों से यही अभिलाषा रखता हूँ कि वे परमेश्वर से सदैव यही प्रार्थना करें कि वह मुझे मेरे कार्य में सहायता दे। उसकी सहायता के बिना मेरे हाथ से कोई भी कार्य नहीं हो सकता; और उसकी सहायता यदि मिल जायगी तो सफलता प्राप्त हुए बिना भी न रहेगी। आप लोग मुझ पर सदैव ऐसी ही कृपा रखें—अब आज्ञा हो—प्रणाम!"

राष्ट्रपति लिंकन का पहला दायित्वपूर्ण भाषण

एब्राहम लिंकन जिस समय स्प्रिंगफील्ड से चला उसी समय उसके प्रतिपक्षियों के मस्तक फिर गये; और उसी समय यह आशंका उत्पन्न हो गई कि बीच में बालटीमोर इत्यादि प्रान्तों में ही कोई उसका घात न कर डाले; और इसीलिए गुप्तचरों का पूरा पूरा प्रबन्ध किया गया तथा इस प्रकार की सावधानी रखी गई कि अचानक कोई ऐरा-ग़ैरा मनुष्य उसके निकट न जाने पावे। इस प्रकार बड़े बन्दोबस्त से वह कुशल पूर्वक वाशिंगटन राजधानी में जा पहुँचा; वहाँ उसका बहुत ही बड़ा आदर-सत्कार हुआ। उस अवसर पर, अधिकारारूढ़ होते हुए, अध्यक्ष की हैसियत से, एकत्रित लोगों को सम्बोधन करके उसने अपना बहुत बड़ा लिखित भाषण पढ़ सुनाया। उस व्याख्यान में अनेक बातों का खुलासा किया गया था; और वह दोनों पक्षों को सम्बोधन करके तैयार किया गया था। भाषण के अन्त में एब्राहम

लिंकन बड़े आवेश से बोला, "मेरे प्यारे देश भाइयो, इस सम्पूर्ण विषय पर आप शान्तिपूर्वक गम्भीर विचार कीजिए। विचार करने में यदि कुछ समय लग जाय तो इसमें कोई हानि की बात नहीं ······ हे असन्तुष्ट देश भाइयो, इस समय यह जो वाद-विवाद उपस्थित है उसमें यदि आपके मत उचित और सत्य हैं तो तदनुसार एकदम कार्य करने की उतावली न करनी चाहिए। विचारबुद्धि, स्वदेशाभिमान, ईसाई धर्म और भक्तकामकल्पद्रुम परमेश्वर के लिए कोई बात असम्भव नहीं है। ये सब तत्व आपके और हमारे बीच के सारे मतभेद को दूर करके हम में एकता करने के लिए समर्थ हैं।········ मेरे असन्तुष्ट देशबान्धवो, आपस में लड़ाई होने के सारे सूत्र आप ही लोगों के हाथ में हैं; वे कुछ मेरे हाथ में नहीं हैं। सरकार आप लोगों पर कदापि आक्रमण न करेगी। जब तक आप स्वयं अपनी ओर से झगड़ा न उपस्थित करेंगे तब तक कदापि झगड़ा नहीं मच सकता। और आप लोगों ने कुछ यह शपथ भी नहीं उठाई है कि इस सरकार का नाश ही कर डालना चाहिए। इसके अतिरिक्त, मैं तो इस राज्यव्यवस्था की रक्षा करने की प्रतिज्ञा अवश्य ही करूँगा······सच पूछिये तो, अब तो यह भाषण समाप्त होना चाहिए; परन्तु मेरा जी समाप्त करने को नहीं चाहता। महाशयो, हम एक दूसरे के शत्रु नहीं हैं, मित्र हैं। हम शत्रु न हों, यही उचित है। क्रोध के आवेश में यदि कोई बात हो गई हो, तो, इतने ही से हमें विभक्त न हो जाना चाहिए, हम एक दूसरे का बुरा चेतें—कदापि उचित नहीं है।" यह भाषण सुन कर सब लोग स्तब्ध हो गये। एब्राहम लिंकन के विरोधियों को भी इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ। परन्तु उनके मन में जो दुराग्रह बसा हुआ था,

उसके लिए वे क्या करते। और यही कारण था कि एब्राहम लिंकन को इस अधिकार की प्राप्ति से जो आनन्द हुआ था उससे अधिक, उसे, अपने सिर पर आई हुई जवाबदारी के विषय में चिन्ता मालूम होती थी; यह बात न केवल उसके भाषण ही से जानी जाती थी; किन्तु उसके मुखमण्डल पर भी वह चिन्ता स्पष्ट झलक रही थी। और इसमें सन्देह नहीं, वह मौका ही ऐसा था, जो उसकी स्थिति वाले प्रत्येक मनुष्य को वैसा ही विकट मालूम हुआ होता। उसका विस्तृत वर्णन करने के लिए यहाँ अवकाश नहीं है।

विरोधियों ने प्रबल रूप से सिर उठाया

तथापि सचमुच ही वह मौका बड़ा भयानक था। उसका वृत्तान्त इस प्रकार है। दक्षिण की कई रियासतों में गुलाम बहुत थे; उनके द्वारा उनके स्वामियों को बड़ा लाभ होता था। एब्राहम लिंकन तथा उत्तर की कई रियासतों की यह इच्छा थी कि यह दासत्व की पृथा, यह गुलामी का रिवाज, बिलकुल उठा दिया जाय। इस कारण दक्षिण ओर की रियासतें उत्तर ओर की रियासतों को, और विशेष कर एब्राहम लिंकन को अपना शत्रु समझती थीं। इसके सिवाय, अब जब कि उनका सारा प्रयत्न व्यर्थ गया; और एब्राहम लिंकन को अध्यक्ष स्थान मिल ही गया तब तो उनके सन्ताप की सीमा ही न रही; और उसको नीचा दिखाने के लिए उनको बड़ा जोश आया। उनमें साउथ कारोलिना नामक रियासत के लोगों ने चार्लस्टन में एक बड़ी भारी सभा करके सर्व सम्मति से निश्चय किया कि, "साउथ कारोलिना रियासत का ऐक्य सम्बन्ध जो अन्य रियासतों से था वह आज से टूट गया।" इसका कारण उन्हों ने यह प्रकट किया कि, अध्यक्ष चुनने में

जिस पक्ष को सफलता हुई है वह पक्ष गुलामों के व्यापार के विरुद्ध है। उसकी और हमारी नहीं पटती। इतना ही करके वे चुप नहीं हुए; किन्तु तत्काल ही उन्होंने अपनी एक मण्डली नियत की; सो इसलिए कि अपनी रियासतों की तरह जो अन्य रियासतें गुलामी के व्यापार के अनुकूल हों उनको, सम्पूर्ण स्वतंत्र रियासतों की एकता से, फोड़ कर अपने गुट में शामिल कर लिया जाय; और राष्ट्रीय सम्पत्ति तथा ऋण का विभाग स्वतन्त्र रियासतों से अलग कर लिया जाय। इस मण्डली के प्रयत्न व्यर्थ नहीं हुए। सन् १८६१ के प्रारम्भ में ही दक्षिण की अन्य छै रियासतें, स्वतन्त्र रियासतों की एकता से फूट कर, साउथ कारोलिना रियासत में आ मिलीं। इस प्रकार जब कुल सात रियासतें एक हो गईं तब तुरन्त ही उन्होंने बलवे का झंडा खड़ा किया। उनको अपने इस षड्‌यंत्र को 'कानफेडरेट' नाम दिया, और स्वतंत्र रियासतों की तरह, जेफरसन डेविस को, सब कानफेडरेट रियासतों का अध्यक्ष नियत किया। इसके बाद बहुत सी सेना एकत्र कर के उत्तर की रियासतों के साथ लड़ने की तैयारी की; और उन रियासतों के जो मुकाम उन्हें आस पास मिले, उन पर हमला करके उनको लूट कर बरबाद कर दिया। इस प्रकार इस शत्रुता का प्रारम्भ हुआ।

लिंकन की अड़चन और तैयारी

पहले के अध्यक्षों के जमाने में दक्षिण ओर के लोगों का महात्म्य बहुत था; और अधिकांश में बड़ी बड़ी सरकारी जगहों पर इसी तरफ के लोग थे। और वे अब तक वैसे ही बने हुए थे। अब इस महत्वपूर्ण अवसर पर सच्चाई को एक ओर रख कर वे सब प्रकार से अपने पक्षपातियों को सहायता करने

लगे। युद्ध सम्बन्धी प्रधान भी उन्हीं में से एक मनुष्य था। उसके हाथ में युद्धसम्बन्धी सम्पूर्ण सामग्री का अधिकार था ही। उसने स्वतंत्र रियासतों के खर्च से बहुत सी युद्धोपयोगी सामग्री तैयार करा कर ऐसी जगह ला कर रखवा दी कि जहाँ से दक्षिण के लोग सहज में ही उसका उपयोग कर सकें। इसके सिवाय सरकारी सेना, जो उसके अधिकार में थी ही, उसको इस प्रकार तितर-बितर कर दिया कि जिससे सहसा उसको कोई एकत्र ही न कर सके। इधर सरकारी कोषमें द्रव्य भी बिलकुल न था। ऐसी दशामें एब्राहम लिंकन बड़े सङ्कट में पड़ा; और यह सोचने लगा कि अब आगे क्या करना चाहिए।

उसने बड़ा प्रयत्न किया कि यह परस्पर की लड़ाई बन्द हो जाय; पर कुछ लाभ नहीं हुआ। दक्षिण वालों ने लड़ाई का निश्चय कर ही लिया था, सो उन्होंने अपना हठ नहीं छोड़ा। अध्यक्षपद पर काम करते हुए लिंकन को अभी पूरा पूरा एक महीना भी नहीं हुआ था कि दक्षिण वालों ने चार्लस्टन के सम्टर किले को घेर लिया; और तोपों की वर्षा करके कोई ३४ घंटे में उस पर अधिकार कर लिया। उस समय उस किले पर केवल ७० आदमी थे। १४ एप्रिल सन् १८६१ की यह घटना है। वास्तव में यह घटना कुछ बहुत बड़ी नहीं थी, तथापि इतना अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि यहीं से दक्षिण और उत्तर वालों में युद्ध का प्रारम्भ हुआ।

उत्तर वालों को जब यह मालूम हुआ कि लड़ाई टालने का प्रयत्न बिलकुल विफल हुआ और दक्षिण वालों ने चढ़ाई कर ही दी तब वे भी अपने छोटे मोटे मतभेदों को भूल कर सब एक हो गये; और उन्होंने यह निश्चय किया कि दक्षिण

वालों का यह बलवा अवश्य ही शान्त करना चाहिए; तथा सम्पूर्ण रियासतों की एकता की रक्षा करनी चाहिए। उनको भी बड़ा जोश आया। यहाँ तक कि राष्ट्रपति एब्राहम लिंकन ने जब पौन लाख सेना एकत्र करने की आकांक्षा उन पर प्रकट की तब उन्होंने दो दिन के भीतर ही इतनी सेना तैयार कर दी; और इसके बाद लिंकन ने जो आकांक्षाएँ प्रकट कीं, सब उन्होंने बात की बात में, और बड़े जोश के साथ, पूर्ण कीं।

इस सङ्कट के समय एक बड़ी विचित्र बात हो गई, वह यहाँ बतलानी चाहिए, वह यह कि, लिंकन का बड़ा भारी प्रतिपक्षी जो डग्लस था, उसके विचार बदल गये; और वह लिंकन में आ मिला, तथा बड़े प्रेम और दृढ़ता के साथ उसे सहायता करने लगा। एब्राहम लिंकन ने पौन लाख नवीन सेना की आकांक्षा जब उससे प्रकट की तब वह बोला, "पौन लाख से क्या होगा, दो लाख तो एकत्र करो। उन बलवाइयों की धूर्तता आपको मालूम नहीं है, मैं जानता हूँ; और इसीलिए आपसे ऐसा कहता हूँ।" इस समय से लिंकन और डग्लस में अभिन्न-हृदय-मित्रता हो गई। हमारी राय में तो डग्लस के इस विचार बदल जाने का कारण लिंकन की साधुता के सिवाय और कुछ भी नहीं है। एक महात्मा ने कहा है कि यदि तुम्हारा चित्त शुद्ध है; और उद्देश्य पवित्र है, तो शत्रु भी तुम्हारे मित्र हो जायँगे, यह बिलकुल सच है।

प्रबल प्रतिपक्षी डगलस का मिलाप

दोनों दलों की सेनाएँ सज्जित हो कर युद्ध प्रारम्भ हो गया। उसमें कभी इनकी जीत होती और कभी उनकी जीत

होती। उन सब लड़ाइयों का वर्णन करना हमारा काम नहीं है। यह काम बड़े इतिहासकार का है। इसलिए हम इस झगड़े में नहीं पड़ेंगे। तथापि जिन बड़ी बड़ी लड़ाइयों के कारण दोनों पक्षों में बड़े बड़े परिणाम घटित हुए उनका संक्षिप्त उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है। सम्टर किला अधिकृत करने के बाद दक्षिण वालों ने हार्पर्स फेरी में रखा हुआ उत्तर वालों का बहुत सा गोला बारूद ले लिया। और गोस्पोर्ट में उत्तर वालों का जो बहुत सा फौजी सामान रखा था उसमें स्वयं उत्तर वालों ने भी आग लगा दी, ताकि दक्षिण वालों के हाथ वह सामान न लगने पावे। इसके बाद बुलरन में दोनों दलों की बड़ी भारी लड़ाई हुई। उन्नीसवीं जुलाई से लड़ाई का प्रारम्भ हुआ, और बाईस तारीख़ को यह ख़तम हुई। दोनों ओर से खूब तैयारी के साथ यह युद्ध हुआ। परन्तु अन्त में विजय दक्षिण वालों को ही प्राप्त हुआ; और उत्तर वाले ऐसे पराजित हुए कि उनको भग कर अपनी जान बचानी पड़ी। इस समय, उत्तर वालों की राजधानी जो वाशिंगटन थी, वहाँ तो कुछ भी प्रबन्ध न था। दक्षिण वालों ने यदि उस पर एक भी हम्ला कर दिया होता तो वह सहज ही उनके हाथ आ जाती। परन्तु वास्तव में उनको मालूम ही न था कि वहाँ प्रबन्ध की बिलकुल कमी है; इसीलिए उस समय राजधानी बची रही, अन्यथा अध्यक्ष लिंकन और उसके अनुयायियों पर बड़ा भारी सङ्कट आ उपस्थित होता। इस अवसर पर उत्तर वालों के बहुत से लोग काम आये, और जो जीवित बचे उनके सिर पराजय आया, कई ग्रन्थकार तो कहते हैं, कि यह जो

गुलामी के पक्षपाती दक्षिण वालों से युद्ध और लिंकन के पक्ष की हार।

कुछ हुआ सो ठीक ही हुआ—किंबहुना परमात्मा को मंजूर ही यही था। वे कहते हैं कि यदि ऐसा न हुआ होता तो उत्तर वालों को दक्षिण घालों की वास्तविक शक्ति मालूम ही न हुई होती, और इस कारण कदाचित् वे बिलकुल ही असावधान रह कर अन्त में नाश को प्राप्त हुए होते। यह बात एक प्रकारसे ठीक भी है। कई भाविक लोगोंका कथन है कि ईश्वर जो कुछ करता है अपने भक्तों के कल्याणार्थ अच्छा ही करता है—बुरा कभी नहीं करता। उपर्युक्त उदाहरण से इस कथन का समर्थन होता है। अस्तु। कुछ भी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसी समय से उत्तर वाले विशेष सावधान हुए और अपना कार्य विशेष जोशके साथ करने लगे।

इस पराजय के बाद एब्राहम लिंकन ने रियासतों से और भी पचास हजार लोग मांगे। रियासतों ने उसकी यह मांग तुरन्त ही स्वीकार कर ली, और सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव पास कर डाला कि लिंकन जितना द्रव्य और जितनी सेना मांगे, तत्काल देनी चाहिए, देर न करनी चाहिए। निदान १८६२ के अखीर में उत्तर वालों के पास कुल छै लाख चालीस हजार सेना जमा हो गई; और उसे उन्होंने बड़े विचार और युक्ति से चारों ओर इस प्रकार विभाजित किया कि जिससे दक्षिण वालों की एक भी न चले।

तथापि, उत्तर वालों का दुर्भाग्य अभी समाप्त नहीं हुआ था। उनका प्रसिद्ध सेनापति एमक्लिन, अपनी बड़ी भारी सेना के साथ, बलवाइयों की राजधानी रिचमण्ड को हस्तगत करने के लिए बड़े डौल से और बड़े जोश के साथ जा रहा था, इतने में दक्षिण वालों की सेना ने रास्ते ही में उसे घेर लिया; और इस बुरी तरह से उसे हराया कि

लिंकन का धैर्य और गुलामों को समूल उखाड़ फेंकने का संकल्प।

उसके १५००० लोग मारे गये; और बाकी लोगों को रणखेत छोड़ कर भागना पड़ा। यह समाचार सुन कर, अन्य कोई यदि होता, तो घबड़ा गया होता, और कदाचित आगे युद्ध चलाना भी बन्द कर देता। पर एब्राहम लिंकन की दशा इससे बिलकुल विरुद्ध थी। अर्थात् इस समाचार से उसका धैर्य तो डिगा ही नहीं, पर उसका साहस और जोश और भी अधिक बढ़ गया; और उसने पहले से भी अधिक तेज़ी से युद्ध की तैयारी प्रारम्भ की। उसने एकदम और भी तीन लाख सेना मांगी; सो रखने का हुक्म मिलते ही उसने और भी तीन लाख माँगी, सो भी उसे मिली। तब उसे पहले से अधिक जोश चढ़ा। और उस जोश के साथ ही उसने अपना पहला विचार बदल कर एक बिलकुल नवीन ही संकल्प किया। और वह संकल्प परमात्मा की कृपा से सिद्ध हुआ; तथा इसी कारण स्वतन्त्रता देवी के पुराण में उसका नाम स्वर्णाक्षरों में लिख रखने योग्य हुआ है।

वह संकल्प इस प्रकार है। यह लड़ाई जो पहले पहल ठनी सो कुछ इसलिए नहीं ठनी कि गुलामी की प्रथा बिलकुल ही बन्द कर दी जाय; किन्तु एब्राहम लिंकन का कथन सिर्फ इतना ही था कि गुलामों का व्यापार करने और गुलाम रखने की चाल जो पहले से किसी नियमानुसार जारी है, उसमें जो वृद्धि हो रही है वह न होनी चाहिए; वह चाल जैसी की तैसी ही रहनी चाहिए। दक्षिण वाले इस बात को नहीं मानते थे; और इसी कारण यह युद्ध ठना था। परन्तु अब एब्राहम लिंकन के मन में आया कि यह काम अधूरा छोड़ना ठीक नहीं। इसको अपनी हद तक पहुँचा देने का मौका आ गया है। इस लिए इस मौके को हाथ से न जाने

देना चाहिए। जब कि इस लड़ाई के शीघ्र बन्द होने की कोई आशा नहीं है, तब फिर गुलामी को बिलकुल ही उठा देने का प्रयत्न क्यों न किया जाय? परन्तु साथ ही उसके मन में ये विचार आ रहे थे कि अगर ऐसा करेंगे तो हजारों लोगों को लाखों प्राणियों की हानि सहनी पड़ेगी; और जो बात अभी तक कानूनन चली आई है वह यदि हम तोड़ डालेंगे तो इसका मतलब यह होगा कि हमने लोगों की हानि की; और इसका हमें बड़ा अपयश होगा। इस प्रकार दोनों ओर के विचारों से लिंकन के मन की दशा बड़ी विचित्र हो गई। वही हाल हो गया कि—

धर्म-सनेह उभय मति घेरी। भइ गति सांप छछूंदर केरी॥

अन्तमें न्यायवृत्ति का ही विजय उसके अन्तःकरण में हुआ। धर्म और न्याय ने उससे यही निश्चित कराया कि गुलामी की प्रथा समूल ही नष्ट करदी जाय। तदनुसार अत्यन्त दृढ़ता और धैर्य के साथ उसने पहली जनवरी सन् १८६३ को—अर्थात् वर्ष प्रतिपदा के शुभ मुहूर्त पर—आखिर घोषणा-पत्र जारी ही कर दिया कि आज से सब रियासतों के सम्पूर्ण गुलामों को मुक्त समझना चाहिए। अब उन पर उनके स्वामियों की किसी प्रकार की भी सत्ता नहीं रही; और अन्य लोगों की ही तरह वे भी स्वतंत्र हैं; उनकी स्वतंत्रता में जो विघ्न डालेगा वह अपराधी समझा जायगा; और उसको सज़ा दी जायगी। सम्पूर्ण रियासतों में इस घोषणा पत्र के प्रकाशित होतेही चालीस लाख गुलाम स्वतंत्र होगये; और उनके स्वामी लोग भी निरुपाय होकर चुप नहीं बैठे, किन्तु अतिशय सन्तप्त होकर पत्र।इम लिंकन के ऊपर दांत पीसने लगे;

गुलामों की स्वतंत्रता की घोषणा।

और साथ ही उन्होंने निश्चय किया कि कुछ भी हो, हम एब्राहम लिंकन तथा इसके अनुयायियों का बदला लिये बिना न छोड़ेंगे। अब, यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इससे लड़ाई और भी विशेष जोश से जारी हुई।

इस इतिहास प्रसिद्ध घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करते समय की एक बड़ी विचित्र बात लिंकन के विषय में बतलाई जाती है। वह यह कि उस समय लिंकन का मन बड़े शशपंज में था कि इस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किया जाय या न किया जाय–न जाने क्या हो; उसका मन उस समय स्थिर न था; तथापि, पूर्वनिश्चयानुसार घोषणापत्र तैयार होकर जब उसके सामने हस्ताक्षर के लिए आया तब हाथ में कलम लेकर हस्ताक्षर तो उसने तुरन्त करही दिये; परन्तु मन की कँपकँपी उस के हाथ में आगई जो कि हस्ताक्षरों में भी स्पष्ट दिखाई देने लगी। उस हस्ताक्षर की ओर देखकर वह आपही आप बोल उठा, "सुबह से काम करते करते मेरा हाथ थक गया है; इसी लिए ये हस्ताक्षर कँप गये हैं। हस्ताक्षर कँप जानेदो; पर मेरा निश्चय अटल है। मैंने इन बलवाइयों से पिछले सितम्बर में ही प्रकट कर दिया था कि यदि तुम अपने प्रजाधर्म को समझ कर शान्त रहोगे; और हमारी सेना को हैरान न करोगे तो हम तुम से कुछ न बोलेंगे; परन्तु यदि तुम अपने प्रजाधर्म को न समझोगे; और ऐसा ही उपद्रव करते रहोगे, तो हम तुम्हारे बलके मुख्य स्तम्भ पर ही कुठाराघात करेंगे। वही अपना कथन अब हम सत्य करके दिखलावेंगे। इस में अब हमारा कोई दोष नहीं।"

इस घोषणापत्र के प्रकाशित होने पर चालीस लाख गुलाम, जो दक्षिणवालों की ओर थे, स्वतंत्र होगये उतना

उनका बल कम हो गया; और उन में से जो बहुत से अच्छे अच्छे लोग थे वे उत्तरवालों की सेना में आकर भरती होगये। इस प्रकार दक्षिणवालों का ज़माना बिलकुल बदल गया। वे बार बार पराजित हुए; उत्तरवाले बड़े आनन्दित हुए; और उनके हर्षनाद से दशो दिशाएं गूँज उठीं।

विरोधियों का पराभव।

तथापि दोनों दलों की लड़ाइयों का क्रम जारीही था। जुलाई सन् १८६३ में बलवाइयों ने मेरीलैंड और पेंसिलवेनिया प्रान्तों में प्रविष्ट हो कर आग लगा दी; और बहुत खून खराबी मचा दी। उस अनर्थका वर्णन पढ़ कर शरीर पर रोमांच खड़े हो जाते हैं। उनप्रान्तों की रक्षा करने के लिए रियासतों की सेना दौड़ी। गेटिबर्ग में दोनों दलों का भयंकर संग्राम हुआ। उस में बलवाइयों की बहुत भारी हानि हुई; और वे बिलकुल पराभूत हो गये। यह समाचार जब लिंकन को मालूम हुआ तब उसे परम सन्तोष हुआ। और जैसा कि उसका सदैव का नियम था उसने सारे देश में घोषणापत्र प्रकाशित किया। उसके अन्त में कहा गया था कि, "जिस विश्वेश्वर की इच्छा में कोई बाधा नहीं डाल सकता उसका नित्य स्मरण रखो और अत्यन्त कृतज्ञता पूर्वक उसका धन्यवाद गाओ।" यह युद्ध कितना भारी हुआ, उसका अनुमान करने के लिए इतनाही बतला देना बस होगा कि, इस में रियासतों की सेना के जो लोग मारे गये, जखमी हुए, ला पते हुए, उनकी कुल संख्या तेईस हजार थी; शत्रु की हानि इससे भी अधिक हुई; यद्यपि उसकी ठीक ठीक संख्या कहीं लिखी हुई नहीं मिली; तथापि इतना अवश्य बतलाया जा सकता है कि उत्तरवालों ने उनके चौदह हज़ार लोग कैद कर लिये।

पेंसिलवेनिया शहर के पास एक बड़ी सी मुठभेड़ हो गई, जिसमें बहुत से वीर काम आये। उनकी समाधियाँ वहीं बनाने के लिए वहां के लोगों ने वहाँ की स्मशान भूमि के पास ही एक भूमिखंड मोल ले दिया। नवम्बर मास में इसका उत्सव हुआ। इस उत्सव में अनेक बड़े बड़े लोगों के साथ एब्राहम लिंकन उपस्थित था। उस अवसर पर उसने जो व्याख्यान दिया उसका सारांश इस प्रकार है:—

वीर-पूजा; आत्म-समर्पण करो !

"आज ८७ वर्ष हुए, हमारे पूर्वजों ने एक नवीन राष्ट्र यहाँ संस्थापित किया। उस राष्ट्र की उत्पत्ति स्वतन्त्रता में हुई थी; और उसका व्रत था कि सब मनुष्यों को परमेश्वर ने समान उत्पन्न किया है। अर्थात् उनमें छोटे बड़े का कोई भेद नहीं है–सब के हक बराबर हैं। इस समय हम लोगों में बड़ा भारी युद्ध हो रहा है; अब इसमें यह परीक्षा होगी कि उक्त व्रत का हम कहाँ तक निर्वाह कर सकते हैं। ....अपने राष्ट्र के उक्त व्रत को अटल रखने के लिए जिन वीरों ने अपने प्राण विसर्जन किये हैं उनके शरीरों को विश्रामस्थल अर्पण करने के लिए आज हम लोग यहाँ एकत्र हुए हैं।........... आज हम यहाँ क्या कहते हैं; और क्या करते हैं, इसका कहीं लवलेश भी न रहेगा; परन्तु उन शूरवीरों ने जो पराक्रम यहां दिखलाया है वह कभी विसराया नहीं जा सकता। उनकी देहों के लिए यह छोटा सा जमीन का टुकड़ा अर्पण करना कुछ भी महत्व नहीं रखता। सच तो यह है कि उन वीरों ने अपना बलिदान देकर जो अधूरा कार्य कर छोड़ा है, उसको पूर्ण करने में अपना आत्म-समर्पण करना ही वास्तविक अर्पण है। अर्थात् अब

अपने आत्मसमर्पण से सम्पूर्ण संसार को यह बतला देना चाहिए कि उन महापुरुषों ने जो आत्म बलिदान किया है सो कुछ यों ही नहीं; किन्तु उनका वह आत्मबलिदान सम्पूर्णतया सफल हुआ है। हमारे इस राष्ट्र की स्वतंत्रता को फिर नवीन अवतार धारण करना चाहिए; और इस पृथ्वी पर अपने सुखके लिए लोगों को अपना राज्य करना चाहिए; यही अत्यन्त पवित्र और अत्युत्तम राज्य प्रणाली है, सो निरन्तर जारी रहनी चाहिए।" लिंकन के इस कथनसे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि अपनी रियासतों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उसने किस प्रकार अपने को समर्पण कर दिया था।

विरोधियों का पूर्ण पराजय, गुलामी का समूल सत्यानाश।

इसके बाद उत्तर वालों की जीत ही होती गई; और विकसवर्ग में उनको बहुत बड़ा विजय प्राप्त हुआ। इसके सिवाय और भी कई जगह लिंकन की सेना ने विजय प्राप्त करके बलवाइयों का पराभव किया। इन विजयों का समाचार सुनकर उस साधु पुरुष को अत्यन्त आनन्द हुआ, यह समझ कर कि यह सब परमेश्वरी कृपा का फल है; हमारा पुरस्कर्त्ता परमेश्वर है; इसी लिए हमारी जीत हो रही है, उसके नेत्रों से प्रेमाश्रु की धाराएं बहने लगीं; और अनन्यभाव से उसने परमेश्वर की स्तुति की। लिंकन इतना ही करके चुप नहीं रहा; किन्तु उसने पन्द्रह जुलाई को एक घोषणापत्र प्रकाशित किया कि छै अगस्त के दिन देश में परमेश्वर का उपकार मानने के लिए समारम्भ होना चाहिए। इस घोषणापत्र में कहा है, "लोगो, हमारे राष्ट्र के हितार्थ परमेश्वर ने जो घटनाएं की हैं उनके लिए यथा योग्य उसका सन्मान करो। जिस क्रोध ने

इतना भारी कलह मचा रखा है, जो कि अभी तक जारी है, उसकी शान्ति के लिए परमात्मा की प्रार्थना करो। और उससे यह वर माँगो कि बलवाई मनुष्यों का हृदय पलट आवे; और इस संकट के समय सरकार के मंत्रियों को यथा-योग्य मंत्र सूझ पड़ें। इसके अतिरिक्त, देश में, इस लड़ाई के कारण जिनके मन को दुःख हुआ हो, जिनके घाव लगे हों, अथवा जिनकी सम्पत्ति का नाश हुआ हो, उनकी ख़बर लो, उनको समझाओ और जहां तक हो सके उनकी सहायता करो। और, कृतकर्म का पश्चात्ताप करके परमात्मा से ऐसी प्रार्थना करो कि जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र सत्य मार्ग पर आवे, तथा परमेश्वर की इच्छा को मान देकर शान्ति के साथ समय बितावे।" अवश्य ही, परमेश्वर में पूर्ण भक्ति हुए बिना ऐसे शब्द लेखनी से निकल नहीं सकते।

इस प्रकार दक्षिण वालों का पराभव हुआ, उत्तर वालों का जय हुआ, स्वतंत्र रियासतों से गुलामी समूल नष्ट हो गई; और सब लोगों ने बड़े आनन्द से स्वीकार किया कि इस सारी सफलता का श्रेय एब्राहम लिंकन को है। यहीं इस महा पुरुष की उन्नति की चरम सीमा है। अब हम अगले अध्याय में यह बतलावेंगे कि इतना बड़ा पद प्राप्त करने पर राज काज में और निजी बर्ताव में एब्राहम लिंकन का कैसा आचरण था।

आठवाँ अध्याय।

राजकाज और निजी बर्ताव।

प्रायः संसार में ऐसा देखा जाता है कि जहाँ किसी को कोई बड़ा अधिकार प्राप्त हुआ कि फिर वह पहले की सारी बातें भूल जाता है; और अकड़ कर चलने लगता है। और इस बात का किसी को कुछ आश्चर्य भी नहीं मालूम होता। जैसे अफीम खाने पर उसका नशा आना एक स्वाभाविक बात है उसी प्रकार अधिकार पाकर उन्मत्त होना भी एक साधारण बात समझी जाती है। तुलसीदास महाराज ने 'रामचरित मानस' में कहा है :--

लिंकन की सरलता और उदारता।

सुनु खगेस अस को जग मांहीं। प्रभुता पाय जाहि मद नाहीं॥

परन्तु जो लोग यह बात अच्छी तरह जानते हैं कि वास्तव में बड़ी पदवी और बड़ा अधिकार क्या है वे अधिकारमद से मतवाले नहीं होते, खूब होश में रहते हैं; और अपने सारे काम नीति धर्म के साथ, जैसे करने चाहिये वैसे, करते हैं। ऐसे बहुत थोड़े उदाहरण इतिहास में हैं, उन्हींमें एक एब्राहम लिंकन का भी उदाहरण समझना चाहिए। इस विषय में अनेक बातें उसके चरित्र-ग्रन्थों में पाई जाती हैं, जिनमें से कुछ यहाँ पर हम देते हैं।

जब कोई बड़ा अधिकार प्राप्त होता है, तब मनुष्य यही समझने लगता है कि ऐसी कोई बात संसार में नहीं जो

मुझे नहीं मालूम है। यह बात लिंकन में नहीं थी। वह अमेरिका का अध्यक्ष—अर्थात् एक प्रकार से राजा था; पर अपनी भूल स्वीकार करने में उसे तृण मात्र भी शंका नहीं मालूम होती थी। जिस समय कि दक्षिण वालों से युद्ध हो रहा था उस समय एक बात पर लिंकन ने सेनापति ग्रेंट को एक पत्र लिखा, जिसका तात्पर्य यह था:—"आप जब पहले पहल विक्सबर्ग शहर के निकट आये, तब आपने वही किया, जो मैंने सोचा था। याजू घाटी से चढ़ाई करने से विजय प्राप्त होगा, इसका मुझे विश्वास तो नहीं था; पर आशा थी, और मैं यह जानता था कि वह बात आपको मुझ से अधिक मालूम थी। आप जब नीचे उतर आये तब मेरा ऐसा विचार हुआ था कि आपको वैसा ही नदी के घुमाव के साथ साथ नीचे जाना चाहिए, और सेनापति बैंक्स से जा मिलना चाहिए। परन्तु वह मार्ग छोड़ कर जब आप पीछे घूम पड़े तब मैंने समझा कि आप ने बड़ी भारी भूल की। पर अब मैं सब बातों को अच्छी तरह जान गया हूँ। अतएव मैं खुले हृदय से स्वीकार करता हूँ कि वह मेरी ही भूल थी, और आपने जो कुछ किया था वही ठीक था।" इस पत्र से एब्राहम लिंकन के मन की सरलता और उदारता का पूर्ण परिचय मिलता है।

(१) एब्राहम लिंकन प्रायः सदैव वाशिंगटन शहर के राज-महल में रहता था। इस महल का नाम अँगरेजी में "व्हाइट हाउस" (शुभ्रसदन) है। इसी महल में प्रायः उसका काम काज हुआ करता था। उसके विषय में अनेक विचित्र बातें जगह जगह लिखी हुई पाई जाती हैं। उन बातों

लिंकन की अप्रतिम दयालुता के उदाहरण।

में उस की दयालुता का अप्रतिम गुण स्पष्ट रूप से झलकता है। सिपाहियों पर वह बहुत प्रेम करता था। उन के चित्त को दुखाना उस को सहन नहीं होता था। सिपाहियों को वह अपनी सन्तति के समान प्यार करता था। एक सैनिक अधिकारी ने इस विषय में एक उपदेशक से एक बड़ी विचित्र बात बतलाई। वह यह है:—"मुझे सेना पतित्व मिले हुए अभी एक ही सप्ताह हुआ था, कि सैनिक न्याय सभा ने चौबीस लोगों को, सेना से भग जाने के अपराध पर, तोप से उड़ा देने की सज़ा दी। उन के वारंट, हस्ताक्षर करने के लिए, मैंने अध्यक्ष लिंकन के पास भेजे। उन पर वह जब हस्ताक्षर न करने लगा तब मैं स्वयं उस से जाकर मिला, और कहा कि, महाराज, इन लोगों को यदि दंड न दिया जायगा तो सारी सेना में अव्यवस्था हो जाने का डर है। थोड़े लोगों पर दया करना मानो बहुत से लोगों पर क्रूरता करना है। यह सुन कर उसने उत्तर दिया, "सेनापति महाशय, देखिये, अपनी इन रियासतों में आज न जाने कितनी विधवाएँ अनाथ हो कर सिसक रही हैं; उन विधवाओं की और भी अधिक संख्या बढ़ाने का मुझ से आग्रह न कीजिए। यह मुझ से कभी न होगा।"

(२) पहरे पर रहते समय सो जाने के अपराध पर एक सिपाही को गोली से मार देने का दंड दिया गया था। इसका वारंट हस्ताक्षर के लिए जब लिंकन के पास गया तब उस ने इस मामले के सारे कागज पत्र मँगा कर उन की जांच की; और उसे क्षमा कर देने का निश्चय उस वारंट पर लिख दिया; और पास ही बैठे हुए एक महाशय से इस विषय में कहा "ऐसे गरीब मनुष्य की जान लेने पर मुझे स्वर्ग लोक में जगह

कैसे मिलेगी ? देखिये, यह किसान का लड़का, खेतों में पाला-पोसा गया, स्वाभाविक ही जल्दी सोने की उस को आदत पड़ गई। पहरे पर रहते समय यदि वह ऊँघ गया तो इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं। इस अपराध पर उसे तोप दम कर देने का दंड मैं कभी स्वीकार नहीं कर सकता।"

(३) एक समय की बात है कि एक बूढ़ी औरत अन्य लोगों के साथ अध्यक्ष लिंकन से मिलने उस के राज महल में आई। जब उस से बात चीत करने का मौका आया तब वह बहुत नम्र हो कर सलाम करके हाथ जोड़ कर बोली, "महाराज, क्या कहूँ, आपके सामने मुझ से बोला नहीं जाता, आज तक अध्यक्ष के सामने बोलने का मुझे कभी अवसर नहीं आया। पर आज बोलना ही पड़ेगा। मैं मेरीलैंड की रहने वाली हूँ। मेरा लड़का सरकार की सेना में सिपाही है। वह घायल हो कर अस्पताल में पड़ा है। मेरी इच्छा थी कि उसे घर ले जाकर मैं उस की दवा-पानी करूं; इस लिए मैंने बड़े प्रयत्न किये, पर कुछ सुनवाई नहीं हुई। वह लड़का मुझे नहीं मिला। मुझ से किसी ने बतलाया कि वह आप के हाथ में है, इसी लिए आज मैं आपकी सेवा में आई हूँ। जिस समय युद्ध प्रारम्भ हुआ, मैंने परमात्मा का नाम लेकर कहा कि जा, युद्ध कर, और बलवाइयों को पराजित कर। तदनुसार वह गया; और अब घायल पड़ा है। उसे यदि कुछ दिन के लिए आप मुझे सौंप दें तो मैं उसकी दवा पानी कर के, खिला पिला कर आराम करूँ। आराम हो जाने पर मैं फिर उसे शत्रुओं को पराजित करने के लिए भेज दूंगी। लड़का अच्छा है; और सरकार की नौकरी के लिए वह कभी इंकार न करेगा। इस लिए, महाराज, आप उसे मुझे

सौंप दें।" यह सुनते हुए लिंकन के ओंठ थर थर कांपते थे, और आखों में आंसू आ गये थे। उस स्त्री का कथन समाप्त होते ही वह उस से बड़ी दया के साथ बोला, "देवी, तुम घबड़ाओ नहीं। परमात्मा तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेगा। तुम्हारा लड़का तुम्हें अवश्य मिलेगा।" इतना कह कर उसने तुरन्त ही, उसका लड़का उसके सिपुर्द कर देने के लिए आज्ञापत्र लिख दिया।

(४) केलाग साहब नामक एक महाशय सेनेट का सभासद था। वह वाशिंगटन में रहता था। एक दिन रात को उसके पास एक तार आया कि तुम्हारे आग्रह से तुम्हारे गावँ के जिस मनुष्य ने सेना में नौकरी की थी उससे कोई क्षुद्र अपराध हो जाने के कारण उसे गोली से उड़ा देने का दण्ड सुनाया गया है, इस लिए इस समय चाहे जिस उपाय से उसे बचाओ। उस तार के पाते ही बिलकुल घबड़ा कर वह युद्ध विभाग के मंत्री के पास गया और उस से आग्रहपूर्वक प्रार्थना की कि उस मनुष्य की सज़ा अभी कुछ दिन अमल में न आनी चाहिए। इस पर उस मंत्री ने उत्तर दिया कि, "इधर कुछ दिनों से इस प्रकार के बहुत से लोग छूट रहे हैं, यह अच्छी बात नहीं है, अब इसको दण्ड अवश्य ही मिलना चाहिए, अन्यथा सेना की व्यवस्था ठीक नहीं रहेगी।" उसका यह कथन केलाग को बहुत बुरा लगा; और वह मंत्री से डपट कर बोला, "मंत्री महाशय, आप घबड़ाते क्यों हैं? मैं उस लड़के को मृत्यु से अवश्य ही बचाऊँगा। आप चाहे जो करें।" उस समय आधी रात हो गई थी, तथापि वह महाशय तुरन्त ही लिंकन के भवन में गया। लिंकन को अभी नींद आने ही लगी थी कि

उस महाशय ने उसे जगाया; और उस लड़के का सारा समाचार इस प्रकार बतलाया कि जिसे सुनकर अध्यक्ष का मन दया से भर आया। केलाग ने कहा, "महाराज, उस तरुण के प्राण अवश्य ही बचने चाहिए। वह मेरा पड़ोसी है; उसकी रक्षा कीजिए।" यह सुन कर लिंकन बोला, "हाँ, आप ठीक कहते हैं, उसे गोली से मार डालने में उसका क्या लाभ होगा? उसकी रक्षा होनी चाहिए।" यह कह कर उसने उस नवयुवक को क्षमा करने का हुक्म तत्काल ही लिख दिया।

(५) इसी प्रकार एक बार एक बड़े अधिकारी ने भी एब्राहम लिंकन से आग्रह किया। उस समय वह काम काज से बिलकुल थक गया था; और कुछ विश्रान्ति लेने के विचार में था, इतने में वह उस अधिकारी की प्रार्थना के उत्तर में बोला, "क्या करूँ मैं इस प्रकार के दण्ड कम करता हूँ और अपराधियों को क्षमा करता हूँ, इससे सेना के लोगों की व्यवस्था बिगड़ती है, उन पर दाब नहीं रहती, ऐसा शोर गुल कई अधिकारी मचा रहे हैं। पर मेरी तो इच्छा यही रहती है कि मृत्युदण्ड वाले अपराधियों की अच्छी तरह जांच करके, जहां तक हो सके, उनको जीवदान दिया जाय, वे आनन्दित रहें, उनके कुटुम्ब के लोग मुझे आशीर्वाद दें और सब को आनन्द हो, इस प्रकार का कोई कार्य करके जब मैं सोने को जाता हूँ तब मुझे बड़ा हर्ष होता है। इसी लिए मैं ऐसा करता हूँ।" इस उदाहरण से लिंकन की भूतदया तो मालूम ही होती है; इसके सिवाय यह भी जाना जाता है कि दूसरों को हर्षित करने में ही उसको हर्ष होता था।

(६) एक दिन एक वृद्ध विधवा राज महल में आकर लिंकन से हाथ जोड़ कर बोली, "महाराज, मेरा पति और

मेरे तीनों लड़के आपकी सेना में भरती होकर गये थे। मेरा पति लड़ाई में घायल होकर मर गया। मैं अनाथ होगई, अब मुझे किसी का सहारा नहीं रहा इसलिए कृपा करके मेरा बड़ा लड़का मुझे वापस दिला दीजिए। वह यदि मेरे पास रहेगा तो मुझ बुढ़िया को बड़ा सहारा रहेगा।" यह सुनकर लिंकन का हृदय भर आया; और वह बोला, "देवी, तुम्हारा कथन बिलकुल ठीक है। तुम्हरा लड़का मिलने के लिए मैं तुम्हें हुक्म लिखे देता हूँ। इसे लेकर तुम सेना पति के पास जाओ। तुम्हारा काम हो जायगा।" वह हुक्म लेकर वह स्त्री सेनापति के यहां जा ही रही थी कि इतने में उससे किसी ने कहा कि तुम्हारा बड़ा लड़का भी लड़ाई में घायल होकर मर गया। यह सुनकर उसे जो दुःख हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। वह वैसी ही रोती पीटती फिर लिंकन के पास आई। उसका यह हाल देखकर लिंकन को बड़ा दुःख हुआ; और उसका हृदय पानी पानी होगया, तथा आंखों में आंसू भर कर वह बोला, "क्या किया जाय देवी, कोई उपाय नहीं। अब जो तुम्हारी इच्छा है; और जो तुम मुझ से प्रकट करने वाली हो, मैं पहले ही से जान गया हूँ। इस लिए तुम्हारा दूसरा लड़का देने के लिए मैं हुक्म लिखे देता हूँ। इससे बराबर बराबर हिस्सा हो जायगा; एक तुम्हारे हिस्से में; और एक हमारे हिस्से में।" तदनुसार उसने हुक्म लिख दिया। उस समय वह वृद्धा स्त्री उसके मस्तक पर हाथ रख कर बोली, "बेटा लिंकन, परमात्मा तुम्हारा कल्याण करे। तेरी उम्र हजार वर्ष की हो; और हमारी रियासतों का अध्यक्ष सदैव तू ही हो।" इस उदाहरण से लिंकन की भूत दया तो प्रकट होती है; पर यह भी मालूम होता है कि इस युद्ध के

अवसर पर एक एक कुटुम्ब के सभी मनुष्य सेना में जाकर भरती होते थे।

(७) एक और नवजवान सिपाही पहरे पर रहते समय सो गया था, इसे भी प्राणदण्ड देने का हुक्म हुआ। उसका वारंट जब लिंकन के पास हस्ताक्षर के लिए आया तब उसने सब कागज-पत्र मँगा कर उस मामले की फिर जांच की। इससे उसे मालूम हुआ कि वह सिपाही पिछले दिन रात को अपना काम करके, अपने एक साथी, दूसरे सिपाही, के बीमार हो जाने के कारण, उसकी जगह पर भी काम किया था; इससे अवश्य ही उसे प्रतिदिन की अपेक्षा अधिक जगना पड़ा; और विशेष निद्रा के कारण लाचार हो कर वह सो गया। यह वृत्तान्त देख कर लिंकन उस सिपाही को निर्दोष बतला कर छोड़ देने का हुक्म भेजा। पर पीछे से उसे यह संशय हुआ कि न जाने यह हुक्म समय पर पहुँचेगा या नहीं; और यदि न पहुँचा तो उसके प्राण भी जायँगे, इसलिए लिंकन स्वयं ही गाड़ी में बैठ कर दस कोस गया; और उस बिचारे के प्राणों की रक्षा की। सब लोगों को इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ; पर लिंकन के लिए यह एक साधारण ही बात थी।

(८) एक बार एक बुड्ढी धोबिन एब्राहम लिंकन से मिलने आई। पर बहुत देर तक वह मिल न सकी; और इतने ही में वह बाहर घूमने के लिए निकल पड़ा। धोबिन ने उसे रास्ते ही में जा घेरा और अञ्चल पसार कर बड़ी विनती के साथ बोली, "मेरा लड़का कहीं सरकार की फौज में नौकर हो गया है, ऐसा मैंने सुना है, परन्तु मुझे उसका पता नहीं है, सो यदि मुझे मेरा लड़का लौट मिले तो सरकार की बड़ी कृपा होगी।" यह सुन कर लिंकन ने उसी जगह तुरन्त ही

अपनी जेब से कागज निकाला और उसके लड़के को ढूंढ़ कर उसके सिपुर्द कर देने का हुक्म लिख दिया। पाठकवृन्द, सोचिये तो सही, इससे उस पुत्रविरह से व्याकुल माता को कितना आनन्द हुआ होगा; और लिंकन को उसने इस उपकार के बदले में अपने मन ही मन कितने आशीर्वाद दिये होंगे।

(६) दुःखभागी प्राणी को छोड़ देने के लिए थोड़ा भी कारण लिंकन के लिए पर्याप्त होता था। एक समय की बात है, कि एक सिपाही युद्ध में खूब लड़ कर जखमी हुआ; और किसी कारणवश सेना से भाग गया। इस पर नियमानुसार उसे गोली से मार डालने का हुक्म हुआ। सिपाही के घर वाले इस मामले को लिंकन के पास क्षमा के लिए ले गये। मामले को जब उसने सावधानी से जांचा तब उसे उसमें क्षमा करने की कोई गुंजाइश नहीं देख पड़ी। परन्तु इतने ही में अकस्मात् ईसाईधर्मशास्त्र का एक वाक्य उसके ध्यान में आ गया, जिसका तात्पर्य यह है कि रक्तपात पापविमोचन है। तुरन्त ही उसने पास के लोगों से पूछा, "क्या लड़ाई में उसके बहुत से घाव हो गये थे?" लोगों ने कहा, "हाँ।" इस पर वह बोला, "तो ठीक है; शास्त्राज्ञानुसार उसको दोषमुक्त करने में कोई हानि नहीं है। इसलिए मैं यह निश्चय करता हूँ कि उसे छोड़ देना चाहिए।"

निस्सन्देह एब्राहम लिंकन बड़ा भारी दयालु था; पर साथ ही वह बड़ा न्यायी भी था; और गुलामी की प्रथा तथा गुलामों के व्यापार से उसको अत्यन्त घृणा थी। एक मनुष्य गुलामों का व्यापार करने में बड़ा प्रसिद्ध था। उसको इस अपराध पर कैद की सजा मिली थी; और एक हज़ार डालर जुर्माने

दया और न्याय का मेल।

का भी हुक्म हुआ था। जब उसकी सज़ा की अवधि बीत गई तब उसने जुर्माना माफ कर देने के लिए लिंकन के यहां प्रार्थना की; उसमें उसने अपना अपराध स्वीकार किया था; और अपनी गरीबी दिखला कर जुर्माना माफ कर देने के लिए बिनती की थी; पर इससे लिंकन का हृदय द्रवित नहीं हुआ। कहते हैं कि उस समय उसने यही कहा कि, "मेरी वृत्ति में यह एक दोष है कि दया की प्रार्थना करने पर मेरा हृदय पिघल उठता है और इसी लिए मैं बड़े बड़े खूनी मनुष्यों को भी क्षमा कर देता हूँ। परन्तु जो मनुष्य कि बड़ा प्रयत्न करके आफ्रिका जाता है और वहां के मनुष्यों को पकड़ ला कर जन्म भर परतंत्रता में रहने के लिए उसे गुलाम के तौर पर बेचता है; और सो भी किस लिए-अपनी जेब गरम करने के लिए-ऐसे मनुष्य को मैं खूनी से भी विशेष अपराधी समझता हूँ; और उसे मैं कभी क्षमा नहीं कर सकता। ऐसे मनुष्य का अन्त कारागृह में ही होना चाहिए-उसके लिए और कोई इलाज नहीं।"

एब्राहम लिंकन न्याय के काम में कभी कभी अत्यन्त कठोर देखा जाता था। एक बार का जिक्र है कि कोई मनुष्य किसी अपराधवश सेना से निकाल दिया गया था। वह एक दिन लिंकन के पास आकर अपना बड़ा लम्बा चौड़ा वृत्तान्त सुना कर फिर नौकरी पर ले लेने के लिए प्रार्थना करने लगा। इस पर लिंकन ने उससे कहा, "यदि हम तुम्हारा यह सब वृत्तान्त सच भी मान लें; और तुम्हारे विरुद्ध जो प्रमाण हैं उन पर ध्यान भी न दें तो भी हम समझते हैं कि जो सजा तुम्हें दी गई है वह बिलकुल उचित है। उसमें न्यूनाधिक करने का मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता।" इस प्रकार

पहले ही बार यद्यपि लिंकन ने उसे स्पष्ट जवाब दे दिया, तथापि वह बार बार अपना वृत्तान्त सुना कर उसे सताने लगा, और अन्त में बोला, "तो फिर जान पड़ता है, हमारा न्याय न करने की आपने प्रतिज्ञा ही कर ली है!" यह सुन कर लिंकन को बड़ा सन्ताप आया; और उसने तुरन्त ही उस मनुष्य को पकड़ कर बाहर निकाल दिया, और ज़ोर से कहा, "अब तुम कभी हमारे पास मत आना। हम तुमसे नहीं मिलेंगे।" एब्राहम लिंकन की न्यायविषयक ऐसी कठोरता और अन्य विषयों में उसकी स्वाभाविक दयालुता तथा मृदुता को देख कर हमें महाकवि भवभूति के इस श्लोक की याद आती है:—

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि कोनु विज्ञातुमर्हति॥

तुलसीदास महाराज ने भी रामचन्द्र जी के ही स्वभाव का वर्णन करते हुए इस प्रकार इस श्लोक का अनुवाद कर दिया है:—

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि।
चित खगेस रघुनाथ अस, समुझि परै कहु काहि॥

मतलब यह है कि सत्पुरुषों का हृदय वज्र से भी अधिक कठोर और कुसुम से भी अधिक कोमल होता है। उनके चित्त की गति समझना अत्यन्त कठिन है। यही हाल एब्राहम लिंकन का भी था।

लोककल्याणकर्त्ता को सुख कहां?

एब्राहम लिंकन जब यह देखता कि हमारे देश में युद्ध जारी है, सम्पूर्ण प्रजा को अत्यन्त क्लेश हो रहा है। और हजारों सिपाही मारे जा रहे हैं तब उसका हृदय भर आता था; और

उसे रात दिन चैन नहीं पड़ती थी। एक दिन एक कुलीन स्त्री उसके पास आकर बोली, "आप कृपा करके यदि हमारे प्रान्त में औषधालय खोलने का प्रस्ताव करेंगे तो आप का सारा जीवन आनन्द में जायगा।" यह सुन कर एब्राहम लिंकन, इस बात को, अत्यन्त निश्चय पूर्वक सिर हिला कर, अस्वीकार करते हुए बोला, "नहीं देवी, नहीं; अब मेरे जीवन के दिन कदापि आनन्द में व्यातीत नहीं हो सकते!" और अन्त में उसका यही कथन सच भी हुआ। कोई एक महाशय लिंकन का बड़ा पुराना मित्र था। वह अकसर लिंकन के यहां जाया-आया करता था। उसने लिंकन के शारीरिक स्वास्थ्य के विषय में कहा है कि, "एब्राहम लिंकन जब अपने घर स्प्रिंगफील्ड से चला है तब उसका शरीर पत्थर की तरह मज़बूत था। उस समय मानों वह वज्रांग सा दिखाई देता था। बीमारी कैसी होती है, सो तो वह जानता ही न था। इस के मुखमंडल पर सदैव आनन्द और उत्साह झलकता रहता था। परन्तु अब, चिन्ता, दुःख और कष्ट से वह कुछ नहीं रहा है; उसके शरीर का वह सारा तेज अब चला गया है; उसके कपोलों में और मस्तक में सिकुड़े पड़ गये हैं।" जैसा कि एब्राहम लिंकन का हृदय था; और जिस दिन से वह अध्यक्ष हुआ था उसी दिन से जैसे संकट और जैसी चिन्ता उस पर आ पड़ी थी, उनका विचार करने पर कहा जा सकता है कि उस की यह जो दशा हो गई थी सो बिलकुल स्वाभाविक थी। चिन्ता के समान भयंकर और कोई रोग नहीं है—और वह चिन्ता भी एक कुटुम्ब के विषय में न थी; एक गावँ के विषय में न थी, एक प्रान्त के विषय में न थी; और न केवल एक रियासत के विषय में थी; किन्तु

अनेक संस्थानों या रियासतों से संगठित एक बड़े भारी राष्ट्र के विषय में थी; और जो युद्ध हो रहा था उसके विषय में उसके प्रति पक्षियोंने यह उड़ा रखा था कि यह भयङ्कर युद्ध एब्राहम लिंकन के दुराग्रह और पक्षपात के कारण ही हो रहा है। इन्हीं सब कारणों से उसका चित्त बहुत ही उदास हो गया था। तथापि धन्य है उस महात्मा के धैर्य को, कि जो इतने संकट सहते हुए भी अपने व्रत पर अटल रहा; और अपने देश से गुलामी का कलङ्क धो डालने में समर्थ हुआ। सच कहा है:—

सन्त-चरित सुभ सरिस कपासू ।
निरस बिसद गुन मय फल जासू ॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ।
बन्दनीय जेहि जग जसु पावा ॥

प्रेम और सहानुभूति के उदाहरण।

(१) एब्राहम लिंकन लड़कों पर बहुत प्यार करता था। वह किसी का भी लड़का देखता, उसके मन में एक दम प्रेम उमड़ पड़ता था। एक बार का ज़िक्र है कि एक स्त्री के पति के लिए मृत्यु दण्ड का हुक्म हुआ था। उसके लिए क्षमा-प्रार्थना करने को वह अपने छोटे लड़के को लेकर अध्यक्ष के महल में गई। पहले तो कुछ देर तक उसका प्रवेश ही वहां तक न हुआ। परन्तु इतने ही में एब्राहम लिंकन अपने कमरे से बाहर निकला; और उस स्त्री ने तुरन्त ही उसके सामने उपस्थित हो कर अपना दुःख निवेदन किया। आखिर लिंकन ने उसके पति को क्षमा प्रदान की। इस पर उसे बड़ा आनन्द

हुआ; और उसने आकाश की ओर आंखें उठा कर परमेश्वर की प्रार्थना की। इतने में पासही खड़े हुए, अध्यक्ष के नौकर दानियाल ने उससे कहा, "देवी, आज तुम्हारा काम तुम्हारे इस छोटे लड़के ने किया! यह तुम्हारा वकील है!" इसका मतलब यह था कि उस लड़के की ओर देख कर लिंकन के मन में दया आ गई, और उसने उस मनुष्य का प्राणदण्ड माफ कर दिया।

(२) मनुष्य चाहे जिस श्रेणी का हो, उसे सन्तुष्ट करने के विषय में लिंकन सदैव दक्ष रहता था। महल से जब वह बाहर जाता और जब बाहर से वह महल में आता तब दरवाज़े पर रहने वाला पहरेदार सदैव नियमानुसार उसे सलाम करता था; एब्राहम लिंकन प्रत्येक बार सिर झुका कर और टोपी में हाथ लगा कर बड़े आदरपूर्वक उसकी सलाम स्वीकार करता था। इस में कभी चूक नहीं पड़ती थी। प्रायः देखा जाता है कि जहां एक छोटा भी अधिकार मिल गया; अधिक नहीं, नायब तहसीलदार ही हो गये कि बस दिमाग आसमान पर चलने लगता है, नीचे दृष्टि ही नहीं आती। ऐसे लोगों को अमेरिका के राष्ट्र पति लिंकन से अवश्य ही शिक्षा ग्रहण करना चाहिए।

(३) दूसरे का दुःख देख कर लिंकन का हृदय सहानुभूति से भर जाता था। यहां तक कि उस सहानुभूति के कारण उसे अपने अधिकार तक का भान नहीं रहता था। एक महाशय ने इस विषय में लिखा है कि, "एब्राहम लिंकन धैर्य और शक्ति में मानो सिंह था; परन्तु जहां दया और प्रेम का विषय आता वहां उसका हृदय पवित्र रमणी की तरह कोमल था। एक दिन बड़ी सख़्त धूप थी, तब मैंने उसे एक

जगह घास पर एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ देखा। वहां वह एक बुड्ढे और लँगड़े सिपाही के, कागज-पत्र देख रहा था; और उसके पिछले वेतन के भुगतान के विषय में हुक्म लिख रहा था।" इतने बड़े अधिकार वाले मनुष्य में इतनी बड़ी सादगी मिलना कठिन है। बड़े अधिकार के साथ ऐसी सादगी उसी मनुष्य में मिल सकती है जो 'साधु'–लक्षण पुरुष होता है। हमारे देश में महात्मा रानडे के जीवन में भी ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं। कोई भी देश हो, साधुओं के लक्षण, स्वभाव और गुण एक ही से पाये जाते हैं। नवयुवकों के लिए ये अनुकरणीय होते हैं।

(४) एक दिन की बात है, एक जगह लिंकन का सन्मान बड़े समारम्भ के साथ हो रहा था, उस में हजारों बड़े बड़े लोग आये थे। उसी भीड़ में, एक घायल सिपाही और उस की वृद्धा विधवा माता भी खड़ी थी; और उन की बड़ी इच्छा थी कि राष्ट्र पति लिंकन हम से कुछ बोले; और उन की यह इच्छा उन के चेहरे से स्पष्ट झलक रही थी। लिंकन ने यह बात ताड़ ली; और उन बड़े बड़े लोगों के बीच से उठ कर वह उन दोनों के पास गया; और उन से थोड़ी सी बात चीत करके उन को सन्तुष्ट किया। इस विषय में लिखते हुए एक उत्तम ग्रन्थकार अपनी राय देता है कि "राष्ट्र के उन्नत होने के लिए और उसकी योग्यता बढ़ाने के लिए इस प्रकार के मनुष्य उस में उत्पन्न होने चाहिए।" यह बात बिलकुल सच है।

शायद कोई समझेगा कि एब्राहम लिंकन जब कि इतना बड़ा अधिकारी-किंबहुना राजा-था तब फिर वह इस प्रकार जब चाहे तब गरीब-गुरबों से मिल कैसे सकता था। परन्तु

इसका उत्तर यही है कि वह जान-बूझ कर ऐसे मौके लाता था। दीनहीनों से मिल जुल कर उन की स्थिति जानने के लिए वह समय निकालता था। एक बार वार्तालाप करते हुए उसने स्वयं कहा था, "मुझे काम बहुत रहता है; और समय नहीं रहता, तथापि, मैं समझता हूँ कि, मेरा जो समय गरीब और साधारण श्रेणी के मनुष्यों में व्यतीत होता है, वह बहुत अच्छे काम में लगता है, उसका सद्व्यय होता है। अकसर देखा जाता है कि सरकारी ओहदेदार अपने काम भर के लिए सर्वसाधारण से सम्बन्ध रखते हैं; और बाकी समय में उन से कोई व्यवहार नहीं रखते। यह बात अच्छी नहीं है। मैं सप्ताह में दो बार इन लोगों में जाता हूँ और उनकी बातें सुनता हूँ, हां, इस में सन्देह नहीं, उनकी कुछ बातें बिलकुल क्षुद्र होती हैं, परन्तु उन में भी कई महत्व की बातें मुझे मालूम हो जाती हैं। और सब से बड़ा लाभ यह है कि जिस प्रकार के लोगों से निकल कर मैं इस पद तक आया हूँ; और जिस प्रकार के लोगों में मुझे फिर लौट जाना है, उन लोगों की अच्छी तरह मुझे याद रहती है।" अपनी पहली हालत की याद रखते हुए चलना महा पुरुष का एक बड़ा लक्षण है।

लिंकन का समझाने का तरीका।

एब्राहम लिंकन बड़ा दलीलबाज़ मनुष्य था। उसकी बात चीत में दलीलें बहुत रहती थीं; और वह अपने मन का आशय, दृष्टान्तों के द्वारा दूसरों को बहुत अच्छी तरह से समझा देता था। इस कारण उसकी बात चीत सुनने वाले को बहुत प्यारी लगती थी; और उसके मन पर बड़ा प्रभाव पड़ता था। एक बार की बात है, कुछ अच्छे अच्छे आदमी, राज्य व्यवस्थाकी त्रुटियाँ अध्यक्ष को बतलाने के लिए

उसके दरबार में गये। पहले उनका सारा कथन उसने बड़ी शान्ति से सुन लिया; और अन्त में यह जतलाते हुए कि, जितना मैं कर सकता हूँ, करता हूँ, वह बोला, "महाशयो, मान लीजिए, आपने अपना सारा द्रव्य एक आदमी के सिपुर्द कर के, उसे एक बड़े सरोवर के पार, एक रस्सी पर से, जाने के लिए बाध्य किया है; और वह जा रहा है। अब, ऐसी दशा में, अरे धीरे-धीरे, अरे गिरेगा, दाहिनी ओर झुका रह, अरे बाईं ओर ज़रा सरक, इत्यादि बारम्बार चिल्ला कर और रस्सी हिला कर उसे घबड़ाहट में डालना अच्छा है या जैसा कि, वह अपने शरीर को सम्हाल कर, बड़ी युक्ति से, सांस साध कर, धीरे धीरे जा रहा है, वैसा ही उसे जाने देना अच्छा है? सरकार के सर पर भार बहुत भारी है। उसे वह धीरे धीरे लिये हुए जा रही है। कृपया आप उसे यों ही घबड़ाहट में न डालिये। आप चुप रहिये। फिर देखिये सारा कार्य ठीक ठीक होता है या नहीं।" लिंकन के कथन का तात्पर्य यही था कि, जहां तक हो सकता है, हम राज्य व्यवस्था अच्छी ही रखते हैं; हमें बीच में आप व्यर्थ के लिए न सताइये।

दुर्गुणों से चिढ़।

कोरी बड़ाई और असत्य भाषण से लिंकन बहुत चिढ़ता था। एक बार एक महाशय उस से मिलने आया; और एक बड़ी जगह, जो खाली थी, उससे मांगने लगा; और बोला कि आप को जो यह अध्यक्ष का पद प्राप्त हुआ है सो अधिकांश में मेरे ही प्रयत्न से प्राप्त हुआ है। लिंकन को उसका यह कथन पसन्द नहीं आया। वह उससे बोला, "क्या सच मुच ऐसा ही है? तो फिर तलवार की धार पर की ये रोटी जो मुझे मिली हैं उनके देनेवालों में आप मुख्य हैं इस लिए जाइये आपके लिए मेरे पास जगह

नहीं है; प्रणाम !" सोचने की बात है, उस महाशय के कथन से जितना क्रोध लिंकन को आया था उतना उसने बाहर नहीं दिखलाया। बिलकुल उचित भाषण किया।

ऊपर जो उदाहरण दिये गये हैं उनसे हमारे पाठकों को मालूम हो जायगा कि एब्राहम लिंकन के राज काज करने का ढँग कैसा था; और उसका निजी वर्ताव कैसा था। वह यह बहुत चाहता था कि लोग उसके ही समान सदाचारी बनें। और इस विषय में वह लोगों को समय समय पर उपदेश भी दिया करता था। वह अपने लड़कों को बारम्बार उपदेश करता था कि, "बेटा, शराब मत पियो, धूम्रपान मत करो, कसम मत खाओ, जूआ मत खेलो, झूठ मत बोलो, और कभी किसी को धोखा मत दो। परमेश्वर की भक्ति करो, सब मनुष्यों पर प्रेम करो, सत्य का सहारा पकड़ो, सदाचरण से चलो, सद्गुणों का ग्रहण करो, इससे तुम को सुख होगा।" और अधिक क्या चाहिए? सारा उपदेश इसमें आ गया इस उपदेश के अनुसार यदि मनुष्य वर्ताव करेगा तो वह सब प्रकार से सुखी हो कर देवता के समान आदर प्राप्त करेगा, इस में कुछ भी सन्देह नहीं।

नववाँ अध्याय ।

अन्तिम कार्य और परलोकवास ।

गुलामी की प्रथा के प्रकरण को ले कर उत्तर और दक्षिण वालों में जो युद्ध जारी हुआ था वह अभी समाप्त नहीं हुआ था। सन् १८६४ शुरू हो गया, तथापि दक्षिण वालों का दुराग्रह दूर नहीं हुआ; और बड़े जोश के साथ वे अपना हठ पूर्ण करने के लिए प्रयत्न करते रहे। एब्राहम लिंकन ने देखा कि जब इन लोगों को अभी सन्तोष नहीं हुआ है तब सेना की नवीन व्यवस्था करने का उसने विचार किया। उस ने सोचा कि जिन लोगों की सैनिक सेवा-फौजी नौकरी की अवधि पूर्ण हो गई है उन को छोड़ना चाहिए, और इधर सेना की शक्ति भी बढ़ानी चाहिए; परन्तु इसके लिए पाँच लाख नवीन सेना जब भरती की जायगी तब व्यवस्था ठीक होगी। तदनुसार उसने अपना विचार कांग्रेस के सामने उपस्थित किया; और पांच लाख नवीन सिपाही तैयार कर के उसने उस सम्पूर्ण सेना पर ग्रैंट साहब को सेनापति नियुक्त किया; और युद्ध कार्य बड़े वेग से प्रारम्भ किया। दोनों दलों में अनेक लड़ाइयां हुईं। उन में पराजय दक्षिण वालों ही का हुआ। इन सब लड़ाइयों में, वर्जीनियाँ रियासत के रिचमंड और पीटर्स बर्ग शहरों को प्रतिपक्षियों से जीतने के लिए जो युद्ध उत्तर वालों ने किये

युद्ध का अन्त।

उनमें तो उन्होंने प्रतिपक्षियों को खूब ही छकाया। दक्षिण वाले भी बराबर अगले वर्ष तक वैसे ही धीरे धीरे लड़ते रहे। परन्तु उन के सब से बड़े सेनापति राबर्ट ली ने जब देखा कि अब कोई उपाय नहीं रहा तब वह अपनी अट्ठाईस हजार सेना के साथ, वर्जीनियां प्रान्त के आफेमाटाक्स कोर्ट हाऊस में, अत्यन्त दीन हो कर, दांतों में तृण दाब कर, उत्तर वालों के शरण हुआ। ६ अप्रेल सन् १८६५ को स्वतंत्रता का विजय और गुलामी की पृथा का मुंह काला करने वाली यह घटना हुई। बस फिर क्या था, दक्षिण वालों का साहस टूट गया; और वे उत्तर वालों की आज्ञा के अनुसार चलने के लिए तैयार हो गये। तथापि, कहीं कहीं छोटी बड़ी लड़ाइयां हो ही रही थीं। परन्तु उनका कोई फल नहीं हुआ। मतलब यह कि यह लड़ाई यहीं समाप्त हुई; और परमात्मा की कृपा से सत्पक्ष का विजय हुआ।

स्वतंत्र हबशियों के द्वारा लिंकन का सम्मान।

रिचमंड शहर जब अपने हाथ आ गया तब दूसरे दिन लिंकन, अपनी सेना की व्यवस्था देखने के लिए वहां गया। वह कुछ बहुत सज धज कर या धूम धाम से नहीं गया; किन्तु बिल कुल एक साधारण मनुष्य की भांति गया। साथ में सिर्फ उसका छोटा लड़का, कुछ कर्मचारी और कुछ खलासी लोग थे। उस समय जो बातें उसने वहां देखीं उनसे न केवल उसे आनन्द ही हुआ; किन्तु उसे यह भी अच्छी तरह प्रकट हो गया कि इस युद्ध के सफलता पूर्वक समाप्त हो ने का कितना अच्छा प्रभाव पड़ा है। ज्यों ही शहर में उसके आने का समाचार लोगों में फैला त्यों ही वे सब हबशी लोग जो कि गुलामी से मुक्त हो कर अब स्वतंत्र हो गये थे, एकत्र हो कर उसके दर्शन को आये। उस समय उसके आस पास

इतनी भीड़ जमा हो गई कि पैर रखने तक को जगह नहीं रही। जिसके मुख की ओर देखिये, लिंकन का ही यश गा रहा था, चारों ओर लिंकन, लिंकन, का शब्द गूँज रहा था; और उसका सन्मान करने के लिये लोग एक दूसरे पर झुके पडते थे। एक बुड्ढी हबशिन अपने दरवाजे खड़ी हुई यह सब तमाशा देख रही थी। उस की दृष्टि जब लिंकन पर पड़ी तब वह आंखों में प्रेमाश्रु भर कर बोली, "प्रभो ईसामसीह! तू अत्यन्त धन्य है! तू ने ही आज मुझे लिंकन के चरणों के दर्शन कराये, यह तेरी मुझ पर बड़ी भारी कृपा है।" इसी प्रकार नाना तरह के उद्गार सब के मुख से निकल रहे थे। सम्पूर्ण समाज उसे प्रणाम करने में बिल कुल मग्न हो रहा था। लिंकन भी अपनी टोपी हाथ में लिये हुए, बार बार सिर नवाते हुए अत्यन्त नम्रता और बड़े प्रेम से, जैसे कोई बड़ी अमूल्य भेट लेना हो उसी प्रकार सब का प्रणाम स्वीकार कर रहा था।

आचरण द्वारा वर्ण भेद का नाश।

उस समय वहां एक बात बड़े महत्व की और ध्यान में रखने योग्य दिखाई दे रही थी; और वह यही कि उस समय लिंकन के मन में यह भेद बिलकुल ही नहीं था कि यह काला हबशी है या गोरा अमेरीकन है अथवा यह लाल रंग का मूल निवासी है-वह उस समय सब को समान रूप से स्वतंत्र देख रहा था, यह बात उसके चेहरे पर स्पष्ट झलकती थी। इस विषय में एक उत्तम ग्रन्थकार लिखता है कि, "लिंकन ने अपने इस आचरण से वहां के जाति भेद को मानो बिलकुल जर्जर कर दिया।" उस दिन रिचमंड में ही उसने ऐसा नहीं किया; किन्तु सन् १८६४ में प्रतिपदा के दिन जब सदैव के नियमानुसार सब छोटे बड़े लोग लिंकन के दर्शन के लिए

आये थे, उस समय का भी वर्णन करते हुए एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार लिखता है कि, "यद्यपि गोरे लोगों का दो घण्टे तक प्रणाम लेते लेते लिंकन बिलकुल थक गया था, तथापि ज्यों ही काले हबशी लोग उस के सामने आने लगे त्यों ही, उनका मान करने के लिए मानों उसमें नवीन उत्साह आ गया; और उसने उन कालों का भी आदर-सत्कार बिलकुल गोरों के समान ही किया। उस समय उन हबशियों को जो आनन्द हुआ उसका वर्णन कोई नहीं कर सकता। लिंकन का विशुद्ध प्रेम और नम्रता देख कर प्रत्येक हबशी के नेत्रों से आनन्दाश्रु टपक पड़ते थे; और वह अपने को कृत कृत्य समझ कर अपने सुप्रसन्न वदन से और हास्य कर के अपना प्रत्यक्ष सन्तोष व्यक्त करता था।"

एब्राहम लिंकन के चरित्र में यह बात अत्यन्त महत्व पूर्ण है। अमेरिका में अनेक वर्षों से हबशियों को बिलकुल नीच समझते आते थे और वहाँ के मगरमस्त गोरे उनके साथ पशुओं का सा बर्ताव करते थे। बिचारा हबशी चाहे जितनी दीनता से चले, उसका गुज़ारा नहीं था, गुलामी करते करते उसके नाकों दम आ गया था। एब्राहम लिंकन ने इस अन्याय को जड़मूल से उखाड़ कर फेंक दिया; और उसने यह बात, न सिर्फ अपने आचरण से ही दिखलाई, कि प्रत्येक मनुष्य उस परमपिता का पुत्र अर्थात् परस्पर भाई—हैं; भेद कोई नहीं है, किन्तु इस अभेद भक्ति के सिद्धान्त को लोगों में स्थापित भी कर दिया। इस एक ही बात से लिंकन के चरित्र में वह प्रभाव आ जाता है कि यदि अन्य गुण उसमें न भी होते, तो भी उसका चरित्र आज संसार के लोगों के लिये आदर्शरूप था। इधर कुछ दिनों से विश्वबन्धुत्व का भाव संसार में बहुत

ज़ोर पकड़ रहा है और जिसे देखिये, यही कहता हुआ दिखाई देता है कि सब मनुष्य एक ही परमात्मा के उपजाये हैं; एक ही प्रकार के हाड़ मांस और खून से बने हैं; किसी में कोई भेद नहीं है। परन्तु केवल वचनों द्वारा इस प्रकार प्रकट करने वाले लोगों का आचरण जब देखा जाता है तब बिलकुल प्रतिकूल दिखाई देता है। उच्चार के अनुसार आचार करने वाले फीसदी दो तीन भी नहीं मिलते। और यही कारण है कि उन के उपदेश निष्फल जाते हैं। सच्चा बड़प्पन इसी में है कि कहने के अनुसार आचरण भी कर दिखलावे।

अस्तु; युद्ध का वृत्तान्त बतलाते हुए हम यहां तक चले आये; पर इसके पहले की एक बात बतलानी रह गई। वह

पुनः राष्ट्रपति चुने जाने का वृत्तान्त और दासत्व विमोचन की भेंट।

यह कि एब्राहम लिंकन की अध्यक्षता की अवधि पूर्ण हो गई थी; इसलिए फिर नवीन अध्यक्ष चुनने के विषय में लोकमत ग्रहण करने का कार्य नियमानुसार हुआ; और बहुमत से एब्राहम लिंकन ही फिर अध्यक्ष चुना गया। यह देख कर दक्षिण वाले बड़े घबड़ाये; और उन्हें निश्चय हो गया कि अब हमें सफलता कदापि नहीं प्राप्त हो सकती। तथापि, उस बहुमान से लिंकन फूल नहीं गया, गर्व और अभिमान उसके पास तक नहीं फटके। फिर अध्यक्ष चुने जाने का समाचार पाने के बाद एक सभा में उस ने कहा, "लोगों ने कृपा कर के मुझे फिर अध्यक्ष नियत किया है, यह मुझ पर उन का बड़ा उपकार है, और इस के लिए मैं उनका बड़ा कृतज्ञ हूँ। पर मैं आपसे यह बतलाये देता हूँ कि अमुक एक महाशय को यह पद नहीं मिला और मुझे मिला, इसका मुझे कुछ भी मत्सर अथवा गर्व नहीं है।

और जो लोग कि इस बात का प्रयत्न कर रहे थे कि यह पद मुझे मिलने न पावे उनके हेतु के विषय में भी मैं कुछ बुरा भला नहीं कहता। दूसरे के अपमान से मेरे मन को कभी सन्तोष नहीं होता। परन्तु मनुष्य के स्वाभाविक अधिकारों और भूतदया के लिए, राज्य में स्वतंत्रता स्थापित करने की जो दृढ़ता, इस कार्य से, लोगों में दिखाई दी, उसके लिए मैं परमात्मा का बड़ा उपकार मानता हूं।" इस से यह स्पष्ट है कि लिंकन का फिर यह दुबारा चुनाव बहुत ही अच्छा हुआ।

दक्षिण वालों का पराभव हुआ। गुलामी जड़ से नाश हो गई। एब्राहम लिंकन को फिर अध्यक्ष पद प्राप्त हुआ। इन सब बातों से उत्तर की रियासतों को और विचारशील सब मनुष्यों को अत्यन्त आनन्द हुआ; और जगह जगह बड़े बड़े उत्सव हुए-एब्राहम लिंकन पर आशीर्वादों और नज़रानों की मानो वृष्टि सी हुई। बालटीमोर के हबशियों ने उसे ईसाई पवित्र शास्त्र की एक सुन्दर पुस्तक भेट की। उसकी एक ओर ऐसा चित्र बनाया था कि एब्राहम लिंकन कुछ गुलामों की बेड़ियां अपने हाथ से तोड़ रहा है; और लिंकन के पैरों के पास एक काग़ज़ पड़ा है, जिस में बड़ी सुन्दरता के साथ **"दास्य विमोचन"** ये अक्षर सोने से लिखे हुए हैं। और पुस्तक की दूसरी ओर एक लेख था, जिस का तात्पर्य इस प्रकार था:—"यह पुस्तक, अमेरिका के स्वतंत्र राज्यों के अध्यक्ष और स्वतंत्रता देवी के परम भक्त को सन्मान पूर्वक और कृतज्ञता पूर्वक समर्पण की गई है।" यह पुस्तक उसे प्रदान करने के लिए जो चुने हुए लोग गये थे उनका बड़ा आदर सत्कार कर के एब्राहम लिंकन उन से बड़ी गम्भीरता से बोला, "परमात्मा ने मनुष्य को जो कुछ उत्तम चीजें

दा हैं उन में ईसाई धर्म शास्त्र उत्तम है। संसार को तारने वाले ने जितनी अच्छी बातें बतलाई हैं वे सारी इस पुस्तक से हमें मालूम होती हैं। यह पुस्तक यदि हमें न मिली होती तो हम यही न समझ सकते कि क्या बात अच्छी है और क्या बुरी है। मनुष्य के सुख के लिए जो बातें आवश्यक हैं वे सब इस में बतलाई हैं। ऐसी यह उत्कृष्ट पुस्तक आप ने कृपा कर के मुझे प्रदान की है, इस के लिए मैं आप का बहुत बहुत धन्यवाद करता हूँ।" लिंकन के इन वाक्यों से यह भली भांति मालूम होता है कि स्वधर्म पर उसकी कैसी श्रद्धा थी।

४ मार्च सन् १८६५ ई० को एब्राहम लिंकन के फिर अध्यक्षपदारूढ़ होने का उत्सव हुआ। लड़ाई उस समय भी थोड़ी थोड़ी हो रही थी; पर शीघ्र ही समाप्त होने के लक्षण दिखाई देते थे। और यह आशा हो रही थी कि अब सारा प्रबन्ध ठीक हो जायगा और सब लोगों को सुख होगा। तदनुसार चारों ओर उत्सव हो रहे थे। उपर्युक्त बड़े समारम्भ में लिंकन ने जो भाषण किया वह बहुत ही उत्तम था। उसके अन्त में उसने कहा, "हमें किसी का बुरा नहीं चेतना है; जहाँ तक होसके हमें सब की भलाई ही करना है; जो उचित है उसे करने के लिये दृढ़ निश्चय धारण करना चाहिए। भाइयो, आओ हम सब मिल कर अपने राष्ट्र के लिए कार्य करें--अर्थात् हमारे राष्ट्र के अंग में जो घाव हो गये हैं उनको बांध कर अच्छा करें; जो युद्ध में पतन हुए हैं उनके स्त्री बच्चों की रक्षा करें, और ऐसा कोई भी उपाय करने से बाकी न रखें कि जिससे हमारे राष्ट्र में तथा अन्य राष्ट्रों में भी न्याय और शान्ति की वृद्धि हो।" इन शब्दों से स्पष्ट मालूम होता है कि इतने बड़े

राष्ट्र का अधिकार पुनः प्राप्त होने से उसे अपना महत्व कुछ भी नहीं मालूम हुआ, और न शत्रुओं के प्रति कोई अविचार की बात उसके मन में आई, किन्तु उसने अब भी यही निश्चय दृढ़तापूर्वक किया कि मानव जाति के लिए जो कल्याण कारक बात है; और जो बात कि परमात्मा को पसन्द है वही करेंगे। ऐसा साधु और परोपकारी पुरुष जब सिंहासनारूढ़ होता है तब प्रजा को सुख होता ही है।

परलोक-यात्रा।

अवश्य। यह ठीक है। परन्तु इस संसार में सभी बातें सदैव सरलता से नहीं होतीं। दुष्टजनों के प्रयत्न यद्यपि नाशकारी होते हैं, और उनके प्रयत्नों को यद्यपि ईश्वर का सहारा नहीं रहता, तथापि, उनके द्वारा, सज्जनों के सुख में बाधा आती ही है। इसमें किसी का बस नहीं। एब्राहम लिंकन यद्यपि इतना साधु पुरुष था और जो कार्य वह करता था, परमात्मा को डर कर करता था; उसने दास्य विमोचन किया, पर इससे हजारों लोगों का व्यापार डूब गया लाखों रुपये का उनका नुकसान हुआ, अनेक लोग एब्राहम लिंकन के वैरी हो गये। यहां तक कि अनेक बार अनेक लोगों ने उसके खून का प्रयत्न किया था; और इस विषय में बार बार धमकी के पत्र उसके पास आया करते थे। परन्तु वह उनकी कभी परवा नहीं करता था। वह अपने व्रत में सुख दुःख मरने जीने को नहीं डरता था। सब कार्य ईश्वर पर भरोसा रख कर करता था। तथापि अन्त में दुष्टों ने अपना दाव साध लिया; और देश में तो बड़ा भारी आनन्द छा रहा था उस में भयङ्कर दुःख मिलाया—रस में विष मिलाया। यही दुःख कथा बतलाने के लिये अब हमें तैयार होना चाहिये।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि जब बिलकुल पहले बार

लिंकन अध्यक्ष के पद पर चुना गया था; और सिंहासनारूढ़ होने के लिए वाशिंगटन आरहा था तभी रास्ते में उसके खून होजाने का भय किया जाता था। परन्तु परमात्मा की इच्छा थी कि उसके द्वारा अमेरिका से गुलामी की प्रथा नष्ट हो, और संसार को स्वतंत्रता का एक उच्च आदर्श प्राप्त हो, सो उसने उसके हाथ से पूरा कराया। परन्तु इस दास्य-विमोचन से, उसके शत्रुओं में और भी अधिक कट्टरता आ गई, और उसके वध होने की सम्भावना और भी अधिक बढ़ गई। परन्तु यह सम्भावना—यह दारुणभय—कुछ बाहर प्रकट नहीं दिखाई देता था। देश में चारों ओर विजयोत्सव मनाये जा रहे थे, सब ओर लिंकन के गुणानुवाद गाये जारहे थे, ऐसे समय में दुष्टों ने षड्यंत्र रच कर उसकी जान लेने का निश्चय किया। यह किसी को मालूम नहीं हुआ। विजयोत्सव के उपलक्षण में अनेक नाटक वाशिंगटन शहर में हो रहे थे, और हजारों लोग उनको देखने जाते थे, और उत्तम उत्तम प्रयोगों में एब्राहम लिंकन आदरपूर्वक बुलाया जाता था। यद्यपि उन अभिनयों में जाने के लिए उसके पास बहुत सा समय नहीं रहता था, तथापि लोगों के आग्रह से और नाटक मंडलियों की प्रसन्नता के लिए वह थोड़ा बहुत समय निकाल कर जाया करता था। १४ एप्रिल सन् १८६५ को प्रसिद्ध हुआ कि अमुक नाटक देखने के लिए वह जाने वाला है। तदनुसार वह अपने कुटुम्ब के मनुष्यों के साथ उस नाटकगृह में जा कर बैठा। अभिनय अपने पूरे रंग में आया, और उस अभिनय ने सम्पूर्ण दर्शकों के मन एकदम आकर्षित कर लिये। सारे प्रेक्षक अभिनय के आनन्द में चित्रलिखित से हो रहे थे कि इतने में एकाएक, बिना किसी हल-

चल के, एब्राहम लिंकन के निकट एक बहुत तेज़ बन्दूक की आवाज़ हुई। इससे सम्पूर्ण प्रेक्षक मंडली चकित अवश्य हुई, परन्तु यह समझा गया कि शायद यह आवाज अभिनय में ही हुई होगी और इसलिए इस विषय में पहले पहल किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया; पर तुरन्त ही लोगों को मालूम हुआ कि यह वार किसी दुष्ट ने एब्राहम लिंकन पर की; और गोली उसके सिर के पिछले भाग से पार कर गई है, तथा वह मरणोन्मुख हो रहा है। उस आनन्दपूर्ण अभिनय में इस भयंकर और शोकपूर्ण अभिनय को देख कर चारों ओर हाहाकार मच गया, लोगों की आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी। सब ओर यही शोर मच गया कि हा! बड़ा अनर्थ हुआ, बड़ा अनर्थ हुआ। कमज़ोर दिल के आदमी तो इधर उधर हका-बका देखने लगे, विचारशील पुरुष, अब आगे क्या करना चाहिए, इस विचार में मग्न हुए, और पुलीस के अधिकारी खूनी मनुष्य को ढूंढने के लिए, जल्दी जल्दी से इधर उधर दौड़ने लगे। चारों ओर एकदम कोलाहल मच गया। इस गड़बड़ में वह हत्यारा वहां से लापता हो गया।

अभी यह वार्ता शहर में फैलने न पाई थी कि इतने में एब्राहम लिंकन के मुख्य मन्त्री सिवर्ड के खून होने का समाचार सुनाई दिया। इससे लोगों ने समझा कि यह सारी कारवाई राजनैतिक है—यह राजनैतिक खून है। अर्थात् उत्तर वालों और दक्षिण वालों के वैर का यह परिणाम है। और इसके पहले भी इस का कुछ प्रमाण नाटक गृह के कुछ लोगों के मन में आया था; क्योंकि वह खूनी मनुष्य गोली चला कर वहां से भागने के पहले बड़े जोश से बोला था कि, "देखो यह दक्षिण वाले कैसे अपना बदला लेते हैं!" विचारा सिवर्ड कुछ बीमार था; और अपने बिछौने पर चुपके पड़ा था। वहीं एक

हत्यारे ने उतने रात में जाकर उसके तीन घाव मारे और उसे अधमरा कर दिया ! वह रात्रि मानो सारे वाशिंगटन शहर को कालरात्रि ही हो गई । नींद किसी को जरा भी नहीं आई। और इस चिन्ता से, कि न जाने अब आगे और क्या हो, सब के हृदय व्यथित हो गये। किसी को कुछ भी न सूझने लगा। लिंकन के कुटुम्ब पर तो दुःख का पहाड़ फट पड़ा। उसकी स्त्री तो उस असह्य शोक से बेहोश हो गई और कई मिनट बाद उसको होश आया। इसके बाद लोग, एब्राहम लिंकन को उठा कर पास ही एक मित्र के घर ले गये। वहाँ बड़े बड़े धन्वन्तरियों ने आकर अनेक प्रकार से चिकित्सा की, पर अन्त में यही निश्चित किया कि आघात प्राणघातक है, इससे लिंकन के बचने की आशा नहीं। तथापि, अनेक उपाय किये गये; पर सब व्यर्थ हुए; और वह महापुरुष दूसरे दिन प्रातःकाल सात बज कर बाईस मिनट पर परलोकवासी हुआ।

प्रिय पाठक वृन्द ! यहाँ एब्राहम लिंकन का चरित्र समाप्त हुआ। ऐसे सदाचारी ईश्वरभक्त महापुरुष की इस प्रकार मृत्यु होना अत्यन्त शोचनीय बात है!

उपसंहार।

एब्राहम लिंकन की मृत्यु से साक्रेटीस की मृत्यु की याद आती है। किंबहुना यह कहना चाहिए कि अनेक महापुरुषों की मृत्यु इसी प्रकार विषप्रयोग या अन्य किसी तरह हत्यारों के द्वारा ही हुई है। इस में परमेश्वर का कुछ तो अवश्य ही हेतु होना चाहिए। परमेश्वर का कुछ भी हो—पर यह प्रकट है कि परोपकारी महापुरुष दुष्टों का शासन करके प्रजा का उपकार करने के लिए अवतीर्ण होते हैं; और इस व्रत का आचरण करते हुए अनेक दुष्ट उनके कट्टर शत्रु बन जाते हैं; और इस कारण उनका प्रायः इस प्रकार का अन्त होता है अस्तु।

एब्राहम लिंकन के चरित्र से हम भारतवासी लोग अनेक

Socrates

प्रकार की शिक्षाएं ग्रहण कर सकते हैं। सबसे बड़ी शिक्षा हमें इस चरित्र से यह मिलती है कि मनुष्य यदि बड़ा बनना चाहता है तो उसे अपने विचार और उच्चार के अनुसार आचार भी कर दिखलाना चाहिए। यही सच्चे धैर्य वाले पुरुष का लक्षण है। इब्राहम लिंकन कोई बड़ा विद्वान् मनुष्य नहीं था, साधारण लकड़हारा अज्ञान पुरुष था। परन्तु अन्य लोगों और उसमें अन्तर इतना ही था कि अन्य लोग यह जान तो लेते हैं कि अमुक बात अच्छी है, और उसे अच्छी कहते भी हैं, पर करते कुछ नहीं हैं, लिंकन जिस बात को कल्याणकारी समझता उसे, अपने मन की दुर्भावनाओं को कुछ भी न चलने देकर, प्रत्यक्ष करके ही दिखलाता था। चारित्र्यबल जिसको कहते हैं वह उसमें पूर्णतया विद्यमान् था; और इसी कारण उसने अपने जीवन में इतनी सफलता प्राप्त की।

वर्तमान समय में हम यह बात भली भांति समझने लगे हैं कि राष्ट्र के प्रति, तथा संसार के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है; और इस विषय में हमारी जो जिम्मेदारियां हैं उनको भी हम समझने लगे हैं, तथापि कोई भी कर्तव्य हम करते नहीं हैं—इसका कारण क्या है—यही कि हम में अपने कर्तव्य के प्रति भक्ति निष्ठा नहीं है। जिस प्रकार परमात्मा को प्राप्त करने में भक्ति और निष्ठा की आवश्यकता होती है उसी प्रकार कर्तव्य करके सफलता प्राप्त करने में भी इन गुणों की आवश्यकता है। एब्राहम लिंकन जिस सत्कार्य को उठाता था उसे पूरा करके ही छोड़ता था। यही बड़प्पन का लक्षण है। एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार उसके विषय में लिखता है कि, "एब्राहम लिंकन के मन में कभी यह विचार स्पर्श तक नहीं करता था कि अमुक बात खुशामद की है, इसलिए करना चाहिए; अथवा इससे इस समय लाभ होता है; इसलिए करना चाहिए;

अथवा लोग अच्छा कहते हैं, इसलिए करना चाहिए, अथवा अधिकार प्राप्त होता है, इस लिए करना चाहिए-किन्तु प्रत्येक कार्य को वह इसी विचार से करता था कि, यह कार्य वास्तव में अच्छा है; इससे लोगों का कल्याण होगा, और अपने विचार पर वह पूर्ण श्रद्धा रखता था। अपने देश के कायदों का यथोचित पालन करने में वह अन्य लोगों से अधिक दक्ष रहता था। कानून को वह देवता के समान पूज्य मानता था।"

संसार के चाहे जिस महापुरुष के जीवन पर आप दृष्टि डालिये, एक गुण आपको स्पष्ट दिखलाई पड़ेगा और वह गुण धैर्य या धृति है; जिसे कि मनु महाराज ने धर्म का पहला लक्षण बतलाया है। यह एब्राहम लिंकन में पूर्णतया पाया जाता था। अन्याय और गुलामी को उठा देने के लिए उसका अवतार हुआ था; यह कार्य उसने अत्यन्त धैर्य के साथ पूर्ण किया। कितने ही विघ्न आये, बार बार निष्फलता हुई, चारोंओर विरोधियों ने निन्दा प्रारम्भ की, वाग्बाणों की वृष्टि की उसने अपना उद्योग नहीं छोड़ा—न्याय के पथ पर अटल रहा; और अन्त में अपने व्रत में सफलता प्राप्त करके ही छोड़ी; आखिर शत्रुओं ने उसकी जान ले ली, पर कर्मवीर पुरुष जान देने को कब डरते हैं उनका मूलमंत्र राजर्षि भर्तृहरि के शब्दों में यही है—

निन्दतु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

प्यारे नवयुवको! एब्राहम लिंकन की तरह धैर्यव्रत धारण करो; दीनों पर दया करो, उनकी दुर्दशा दूर करने के लिए एब्राहम लिंकन की तरह अपने जीवन को अर्पण करो। परमात्मा तुम्हारे मनोरथ पूर्ण करेगा।

तरुण-भारत-ग्रन्थावली।

[सम्पादक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

१—अपना सुधार।

मानसिक, शारीरिक और आचारसम्बन्धी सुधार के अनुभवसिद्ध उपाय इस पुस्तक में बतलाये गये हैं। स्कूल पाठशालाओं के विद्यार्थियों को पारितोषिक में देने के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी है। मध्यप्रदेश के शिक्षाविभाग ने भी इसे स्वीकार किया है। मूल्य सिर्फ ।=) आना।

२—फ्रांस की राज्य क्रांति।

इतनी उत्तम ऐतिहासिक पुस्तक अभी तक हिन्दी में नहीं निकली थी। "सरस्वती" पत्रिका इसकी प्रशंसा करती हुई लिखती है—"पुस्तक का विषय इतिहास है। पर लिखने का ढँग बहुत सरस है। इससे पढ़ने में उपन्यास का सा आनन्द आता है।" मूल्य ॥।≋) आना।

३—महादेव गोविन्द रानडे।

"हिन्दी-केसरी" लिखता है—"उनकी चरित्रसम्बन्धिनी अब तक जितनी पुस्तकें हिन्दी में निकल चुकी हैं, प्रस्तुत पुस्तक उनसे बहुत कुछ विशेषता रखती है। "महात्मा रानडे तथा उनकी धर्मपत्नी रमाबाई के दो चित्र भी यथास्थान दिये हैं। मूल्य ॥≈) आना।

सूचना—आठ आने प्रवेश फीस जमा कर के स्थायी ग्राहक हो जाने वाले महाशयों को ग्रन्थावली की सब पुस्तकें पौने मूल्य पर मिला करती हैं।

दीक्षित और द्विवेदी, दारागञ्ज, प्रयाग।

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे अङ्कित है। इस तिथि सहित १५ वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए अन्यथा ६ नये पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

18 OCT 1966		
25 OCT 1966		

26.06.06